Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत में राष्ट्र

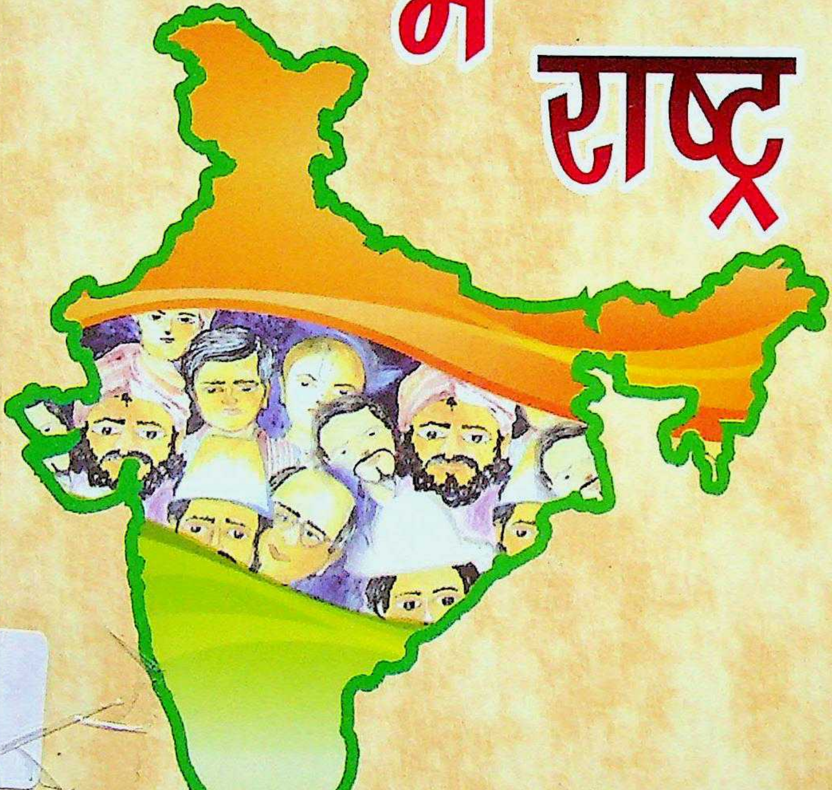

3

भागवत

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

167954

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत में राष्ट्र

1. जीवन पद्धति का नाम धर्म है और धर्म का सार है कि जो व्यवहार तुम अपने साथ किया जाना पसन्द नहीं करते वह किसी के साथ न करो।
2. विचार शैली को संस्कृति कहते हैं।

हिन्दू राष्ट्र के यही दो आधार हैं एक धर्म तथा दूसरा संस्कृति। धर्म तथा संस्कृति मूल रूप में बदली नहीं जा सकती।

कम्पोज़िट (कल्चर) एक धोखा है। कम्पोज़िट सभ्यता तो मानी जा सकती है। दो संस्कृतियों की मिलावट करने का प्रयास बड़ा भयंकर होगा।

हिन्दी साहित्य सदन

2, बी.डी. चैम्बर्स, 10/54 देश बन्धु गुप्ता रोड,
करोल बाग प्रह्लाद मार्केट के समीप, नई दिल्ली-110005

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारा उद्देश्य

विशुद्ध भारतीय तत्वदर्शन पर गवेषणा करना तथा उसका प्रचार करना एवं उसके आधार पर राष्ट्र के सम्मुख उपस्थित के सभी समस्याओं का सुलझाव प्रस्तुत करना।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भारत में राष्ट्र

—गुरुदत्त

Central Library
167954
Gurukula Kangri (Deemed to be University) Haridwar

आर्ष साहित्य
Complete Vedic Books Store
Yog, Vedic, Ayurvedic, Relegious
All Yog & Organic Products
(M) 9541317278, 8869821468
Web.: aarshsahitya.com

081
167954

हिन्दी साहित्य सदन
नई दिल्ली 110005

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस शृंखला के कुछ प्रकाशन—

1. क्या भारत का इतिहास भारत के शत्रुओं ने रखा है?
2. भाग्य चक्र
3. भाव और भावना
4. राष्ट्र राज्य और संविधान
5. वीर पूजा
6. धर्मवीर हकीकत राय
7. अन्तिम यात्रा

R
080.9143
GUR-B

मूल्य : तीस रुपये

प्रकाशक : **हिन्दी साहित्य सदन,**
2, बी.डी. चैम्बर्स, 10/54 देश बन्धु गुप्ता रोड,
करोल बाग थाने के सामने, नई दिल्ली-110005
फोन : 3553624 फैक्स : 91-11- 5412417

संस्करण : 2012

शब्दांकन : गोयल इन्टरप्राईज़िस, दिल्ली-110032

मुद्रक : संजीव ऑफसेट प्रिन्टर्स,
दिल्ली-110051

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सम्पादकीय

राष्ट्र एक अवस्था है। राष्ट्रवाद उस अवस्था की सार्थकता का सिद्धान्त है एवं राष्ट्रीयता उक्त अवस्था की भावना है। – गुरुदत्त

1947 से, जब से भारत को स्वतन्त्रता मिली है, कांग्रेसी नेता, तत्कालीन प्रधान मन्त्री जवाहरलाल नेहरू से लेकर उनके छुट-भय्ये तक, हिन्दू राष्ट्र की कल्पना का विरोध करते रहे हैं। हिन्दू राष्ट्र की भावना और घोषणा को देश के लिये घातक कहते रहे हैं।

वास्तव में कांग्रेस की नींव ही उस विचारधारा पर रखी गई थी जो हिन्दुस्तान में हिन्दू का नाश करने के लिये अंग्रेज़ों ने विचारी थी।

देश में जागृति हो रही थी। अंग्रेज़ों का विरोध क्रान्तिकारी आन्दोलनों से हो रहा था। यहां तक कि क्रांतिकारी इंग्लैण्ड में पहुँचकर आन्दोलन तथा गतिविधियां चला रहे थे और सभी क्रान्तिकारी हिन्दू विचारधारा तथा आर्य समाज के प्रभाव में थे।

इन हिन्दू आन्दोलनकारियों का प्रभाव समाप्त करने के लिये एक योजना बनाई गई। कांग्रेस संस्था की सदस्यता के लिये एक शर्त यह थी कि वह अंग्रेज़ी शिक्षित होना चाहिये। अंग्रेज़ी शिक्षा द्वारा उनमें हिन्दू विरोधी भाव भरे गये तथा ऐसे लोगों को देश की बागडोर संभालने के लिये कहा गया।

अंग्रेज जानता था कि हिन्दुस्तान में यदि कोई उनका शत्रु है तो वह हिन्दू है। हिन्दुओं को दबाकर रखने के लिये मुसलमानों को उभारना चाहिये। इसके लिये कांग्रेस को मुसलमानों का सरपरस्त बनाया गया। उनको कहा गया कि

आर्ष साहित्य
Complete Vedic Books Store
Yog, Vedic, Ayurvedic, Relegious
All Yog & Organic Products
(M) 9541317278, 8869821468
Web.: aarshsahitya.com

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अधिवेशनों में जितने प्रतिनिधि भेजें, उनमें प्रति दस प्रतिनिधियों के पीछे कम से कम दो मुसलमान होने आवश्यक हैं। उस समय दो राष्ट्रवादी मुसलमान मिलने भी कठिन हो गये थे। तब रिश्वत देकर भाड़े के मुसलमानों को खद्दर के कपड़े पहिनाकर साथ ले जाया जाने लगा। ऐसी थी कांग्रेस।

मुसलमानों को फुसलाने के लिये कांग्रेस हिन्दू विचार के लोगों की निन्दा करने लगी। उनके विरोध में ढोल पीटा जाने लगे। इसका प्रभाव भी होने लगा।

देश के 'दुर्भाग्य' से तथा अंग्रेज़ों के 'सौभाग्य' से ऐसे समय गांधी तथा जवाहर लाल नेहरू 'अवतरित' हुए। गांधी अपनी मानसिक स्थिति, जैन धर्म तथा वैष्णव मत के प्रभाव के कारण (स्वयं कष्ट सह कर दूसरों को प्रसन्न रखना) मुसलमानों को खुश करने की प्रवृत्ति बना बैठे। यहां तक कि एक बार, हिन्दुस्तान के हितों के विरुद्ध, जिन्ना को ब्लैंक चैक देने को तैयार हो गये थे। और नेहरू कम्यूनिज्म के प्रभाव के कारण हिन्दुओं को गालियां देने लगे। हिन्दु जनता गांधी के महात्मापन के प्रभाव में थी और महात्मा गांधी मोतीलाल नेहरू के प्रभाव में आये हुए थे। गांधी जी एक असफल वकील थे और मोतीलाल नेहरू बैरिस्टरों के सरताज थे। मोतीलाल नेहरू अंग्रेज़ीयत के भक्त थे और जिस प्रकार साधारण व्यक्ति अंग्रेज़ी सरपट बोलने वाले को साहब समझकर सलाम करता है यही भाव गांधी में आ जाने के कारण से वह मोतीलाल नेहरू के दीवाने थे। उनके लिये यह बहुत बड़ी बात थी कि मोतीलाल नेहरू की मित्र मण्डली में अंग्रेज़ स्त्री पुरुष हैं।

जवाहरलाल नेहरू राजनीति में उतरे। अपने मन में हीन भाव के कारण गांधी नेहरू की किसी बात का विरोध नहीं कर सकते थे। अपितु स्थिति यहां तक थी कि वह नेहरू को आगे लाने लगे। इसमें एक कारण यह भी माना जाता है कि जवाहरलाल नेहरू का गौर वर्ण उनको अंग्रेज़ के समान ही आकर्षक बना देता था।

परिणाम यह हुआ कि जब अन्तरिम सरकार 1946 में बनाने के लिये कांग्रेस के प्रधान का निर्वाचन होने लगा तो सरदार पटेल का नाम सर्वोपरि था; परन्तु गांधी नेहरू के पक्ष में अड़ गये। नेहरू को प्रधान बनाया गया तथा अन्तरिम सरकार के वह प्रधान मन्त्री बने। नेहरू के विषय में यह कहा जाता है कि कभी हिन्दू राष्ट्र का उल्लेख होता था तो उनका क्रोध सीमा पार कर जाता था।

नेहरू के पश्चात् इन्दिरा गांधी राजनीति में आई। वह पिता से भी बढ़कर हिन्दू विरोधी सिद्ध हुई।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

आज स्थिति यह हो गई है कि भारतीय संस्कृति के किसी पहलु का नाम लो देश के कम्युनिस्ट नेता, समाजवादी नेता तथा बहुजन समाजवादी पार्टी, दक्षिण की पार्टियां चिल्लाने लगती हैं कि भाजपा संचालित केन्द्रीय सरकार देश का भगवाकरण कर रही है और उनके पीछे-पीछे चलने वाली सोनिया गांधी भी शोर मचाने लगती हैं कि भाजपा भगवाकरण से बाज आये। मानो 'भगवाकरण' कोई गाली है।

हिन्दू मानता है कि वेद ज्ञान के भण्डार हैं। वेद का नाम लो तो यह भगवाकरण है। संस्कृत तथा हिन्दी भाषा अथवा वैदिक शिक्षा का नाम लो तो 'भगवाकरण'। यहां तक कि भारतीय संस्कृति के किसी पहलु का नाम लो तो 'भगवाकरण' की गाली दी जाने लगती है।

यह कहा जाता है कि देश के बीस करोड़ से अधिक मुसलमानों को मुख्य धारा में लाया जाना चाहिये। ठीक है। कौन मना करता है? परन्तु जब तक मुसलमान जेहादी मुल्लाओं के प्रभाव में हैं, वे मुख्य धारा में आयेंगे क्या? यदि आये भी तो अपनी शर्तों पर आयेंगे। हाँ, सरकार यदि बीस करोड़ मुसलमानों को राष्ट्रीय शिक्षा देकर उनकी कट्टरता समाप्त कर सके तो बात दुसरी है। यदि ऐसा कर सके तो ठीक है अन्यथा वह स्वयं भी धोखा खायेगी, हिन्दू जनता को भी धोखे में रखेगी और सरल चित्त हिन्दू तो बारह सौ वर्षों से धोखा खाते आ रहे हैं।

शिक्षा को बदले बिना तथा मुल्लाओं का प्रभाव कम किये बिना, कम से कम राजनीतिक क्षेत्र में तथा जेहादी परम्परा के विषय में, मुसलमानों की समस्या हल नहीं हो सकेगी। इसके बिना कोई मार्ग नहीं है। न अन्य पंथः।

यहां 11 सितम्बर 2001 के दिन जो दुर्घटना अमरीका के न्यु यार्क शहर में हुई है, उसका उल्लेख करना अप्रासंगिक नहीं होगा। यात्रियों सहित हवाई जहाज का अपहरण करके विश्व व्यापार केन्द्र के भवनों से टक्कर मारकर उनको गिराना तथा सात हजार से भी अधिक नागरिकों का संहार नीचतापूर्ण हरकत कही जा सकती है। इससे भी अधिक नीचतापूर्ण हरकत यह है कि ऐसी घटना पर विश्व भर के मुसलमानों ने (अपवाद छोड़कर) इस पर प्रसन्नता प्रकट की, कइयों ने तो मिठाई बांटी। अब जब अमरीका इसका प्रतिकार करने की घोषणा कर रहा है तो दुनिया भर के मुसलमान उसके विरुद्ध रोष प्रकट करने के लिये सड़कों पर उतर आये हैं। कई मस्जिदों में जा कर लादेन की लम्बी आयु के लिये तथा तालिबान के पक्ष में दुआएं मांगने लगे हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

प्रश्न यह है कि यदि आतंकवादियों की घटना घृणित कार्य है तो ऐसा करने वालों के साथ सहानुभूति प्रकट करना तथा उनकी सलामती की दुआएं करना कैसे दोषरहित माना जा सकता है? हत्यारों की प्रशंसा करना, उनकी रक्षा करना क्या जुर्म नहीं है? यदि है तो वह कौम कैसे निर्दोष कही जा सकती है?

यह उस कौम की मानसिकता दर्शाता है। जब तक ऐसी मानसिकता इस कौम में बनी रहेगी, कैसे इन पर विश्वास किया जा सकता है?

कितनी विचित्र बात है कि एक हिन्दू इस्लाम धर्म स्वीकार करते ही इतना पतित हो जाता है कि अपने सगे बहिन भाइयों तथा माता पिता को भी मारने के लिये तैयार हो जाता है। ऐसे भाव उसके मन में भरे जाते हैं कि अपने खून के रिश्ते को भी वह स्वीकार नहीं करता, तब दूसरे धर्म को मानने वालों को कैसे सहन करेगा?

इस प्रकार मुसलमानों का, आतंकवादियों के पक्ष में प्रदर्शन करना एक बात को प्रकट करता है कि इस्लाम आतंकवाद साथ-साथ चलते हैं। आतंक फैलाना मुसलमान अपना धर्म मानते हैं। उन्होंने स्वयं को आतंकवाद के साथ जोड़ लिया है। यह अत्यन्त भयावह स्थिति है।

इस छोटी-सी पुस्तक में लेखक ने हिन्दू, भारती तथा आर्य शब्दों की व्याख्या की है तथा राष्ट्र, राज्य, संस्कृति, धर्म का परस्पर सम्बन्ध स्पष्ट किया है। लेखक का युक्तियुक्त मत है कि जब तक देश को कम्युनिस्टों, समाजवादियों और उनके पिछलग्गु कांग्रेसियों के दुष्प्रभाव से मुक्त नहीं किया जायेगा, देश के कल्याण की आशा नहीं करनी चाहिये। इस समय प्रगति के नाम पर देश में विकास हो रहा है; परन्तु किस मुल्य पर? यह एक प्रश्न है।

अरबों रुपये के घोटाले हो रहे हैं। देश का कोई भाग आतंकवादियों से सुरक्षित नहीं रहा। जनता का नैतिक पतन होता जा रहा है। भोग-विलास, चरस तथा मादक द्रव्यों का सेवन बढ़ता जा रहा है।

देश को महान् बनाने के लिये देश के मूल निवासी हिन्दू को बलवान बनाना होगा। बारह सौ वर्षों तक वही देश के शत्रुओं से लड़ता आया है और भविष्य में भी उसी से आशा है, यदि नास्तिक भौतिकवादी सरकार ने उसे कुछ करने लायक रखा।

—सम्पादक

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय-क्रम

1.	हिन्दू शब्द की परिभाषा	11 – 15
2.	आर्य अथवा भारती	15 – 19
3.	चक्रवर्ती राज्य और साम्राज्य	20 – 23
4.	राष्ट्र का स्वरूप	24 – 31
5.	राष्ट्र और देश	31 – 34
6.	राज्य और राष्ट्र	34 – 41
7.	राष्ट्र, राज्य और देश	41 – 46
8.	संस्कृति	46 – 50
9.	धर्म	50 – 53
10.	धर्म और पंथ	53 – 58
11.	राष्ट्र और जाति	58 – 66
12.	भारत में राष्ट्र	67 – 73
13.	देश एक राष्ट्र अनेक ?	73 – 78
14.	निष्कर्ष	78 – 85

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक

हिन्दू शब्द की परिभाषा

हिन्दू क्या है? इसकी व्याख्या हिन्दू राष्ट्र की समस्या को समझने में प्रथम चरण है। यह सत्य है कि हिन्दू शब्द इस देश के प्राचीन निवासियों का नहीं था। भारत शब्द बहुत प्राचीन माना जाता है। कदाचित् यह नाम आदि सतयुग से चला आता है। यह कहा जाता है कि भरत मुनि के कारण देश का नाम भारत पड़ा था। कुछ अन्य कहते हैं कि कुरुवंशोत्पन्न दुष्यन्त के पुत्र भरत के नाम से इस देश का नाम भारत हुआ है। कुछ भी हो, भारत प्राचीन है। महर्षि व्यास जी के 'जय' ग्रन्थ का नाम 'भारत' और पीछे महाभारत भी इसी कारण रखा गया था कि इस देश को भारत देश माना जाता था। परन्तु यह एक देश का नाम था, देश के निवासियों का नहीं।

हर्षवर्धन के काल में भी इस देश का नाम भारत था। हर्षवर्धन सातवीं शताब्दी ईसा में हुआ था। यह लिखा मिलता है कि हर्षवर्धन ने पाँच भारतों को विजय किया। इससे स्पष्ट है कि भारत देश था और इसके भीतर कई भारत थे, जिसमें से हर्षवर्धन ने पाँच विजय किए थे। परन्तु उस काल में भी ऐसे प्रमाण नहीं मिलते कि इस देश के लोग भारतीय कहे जाते हों। गुप्त काल में इस देश के रहने वालों को हिन्दू नाम दिया गया प्रतीत होता है। उस समय यहां के लोग एक बहुत बड़ी संख्या में व्यापारादि के लिये अफगानिस्तान, जो उन दिनों गंधार के नाम से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विख्यात था, ईरान जो उन दिनों यवन नाम से विख्यात था तथा मध्य एशिया, तिब्बत और पूर्व में बर्मा, मलाया, कम्बोदिया इत्यादि देशों में जाते थे। यही अनुमान लगाया जाता है कि अफगानिस्तान, ईरान, तुर्किस्तान, अरब इत्यादि देशों के लोगों ने यहां से जाने वाले व्यापारियों को हिन्दू नाम दिया था। वे सिन्धु नदी को हिन्दू नदी के नाम से सम्बोधित करते थे। उन देशों के लोग भी भारत में आते थे और वे यहां आकर भी यहां के लोगों को उसी नाम से सम्बोधित करते थे।

हिन्दू नाम भारत देश निवासियों ने स्वीकार किया और फिर इस नाम को मान और प्रतिष्ठा दी। यही इतिहास से विदित होता है। एक विचार इसमें यह भी है कि सप्त सिन्धु का नाम इस देश में बहुत प्राचीन काल से है। कुछ लोग तो इसे ऋग्वेद में से निकालते हैं। यद्यपि यह निर्विवाद सत्य नहीं कि सप्त सिन्धु देश के नाम के रूप में ऋग्वेद में है, परन्तु अन्य संस्कृत ग्रन्थों में यह शब्द देश का सूचक पाया जाता है। इस पर भी यहां के निवासियों को सिन्धु अथवा हिन्दू के नाम से तो बहुत पीछे कहा जाने लगा।

युवानच्वांग ने इस देश के रहने वालों को हिन्दू नाम से सम्बोधित किया है। इसके उपरान्त यहां के निवासियों को हिन्दू नाम से सम्बोधित करने के प्रमाण प्रचुर मात्रा में मिलते हैं। चन्द बरदाई के पिता महाकवि वेन ने पृथ्वीराज के पिता को सम्बोधित करते हुए एक कविता में 'अटल हिंदव अस्थानं' के शब्दों का प्रयोग किया है। इससे प्रकट होता है कि उस समय न केवल यहां के रहने वालों को हिन्दू कहा जाता था, वरंच इस देश को हिन्दुस्तान भी कहा जाने लगा था। उपर्युक्त शब्दों में हिन्दू और हिन्दू अस्थानं नामों के लिये गौरव की गंध भी आती है। इस पद का अर्थ है 'हिन्दू-अस्थान अमर रहे।'

चन्द बरदाई ने भी 'पृथ्वीराज रासो' में यह पद लिखा है–

मति हिन्दु पर साहि सज्ज आऔ स्वस्थानह।

यहां इस देश के निवासियों का हिन्दू नाम गौरव के साथ प्रयोग किया है। अर्थात् चन्द बरदाई के काल में हिन्दू नाम एक गौरवपूर्ण हो गया था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस कविवर ने अपने ग्रन्थ में अनेक स्थलों पर हिन्दू शब्द का प्रयोग किया है। यथा—'जब हिन्दु दल जोर हुअ' 'जुरे हिन्दु मीरे' 'हिन्दु म्लेच्छ अघाइ घाईन' 'आज भाग हिन्दुवान' 'धनि हिन्दु पृथिराज।' इसी प्रकार अनेक स्थानों पर हिन्दू शब्द यहां के निवासियों के लिये प्रयुक्त हुआ है।

समर्थ स्वामी रामदास जी ने भी अपनी वाणी में हिन्दू शब्द का प्रयोग किया है। आपने लिखा है—

बुडाले सर्व ही पापी, हिन्दुस्थान बलाबले।

महाकवि भूषण ने भी हिन्दू नाम की महिमा गान की है—

'हिन्दुन के पतिसों न विसात सतावत हिन्दु गरीबन पायके।'

फिर यही कवि लिखते हैं—

पातसाह जीसो हिन्दुपति सेवा ने,
दाढ़ी के रखैयन की दाडीसी रहति छाति।

और भी लिखा है—

राखी हिंदुवानी, हिंदुवान के तिलक राख्यो,
स्मृति और पुराण राख्यो वेद विधि सुनि में।

भूषण ने छत्रपति शिवाजी के विषय में भी लिखा है—

हवर हरट्ट साजि, गैवर गरट्ट समपैदर थट्ट फौज तुरकन की।
भूषण भनत राय चंपति को छत्रसाल रोप्यो रनख्याल ह्वैके ढाल हिन्दवाने की।।

श्री गुरु गोविन्दसिंह जी ने भी लिखा है—

हिन्दु तुरक दीन द्वै गायो। तिनसो वैर सदा चलि आयो।
लेख्यो सुर असुरन को जैसी। केहरि करिन बखानो तैसी।।

गुरु तेग बहादुर जी के विषय में भी यह कहा जाता है कि कश्मीरी ब्राह्मणों ने उनको सम्बोधित करते हुए कहा था—

तुम सूनो दिजेसु ढ़िग तुकेसु अवैसु इमगावो
इक पीर हमारा हिंदु भारा भाईचारा लख पावो
हैं तेगबहादुर जगत उजागर ता आगर तुर्क करो
तिस पीछे तब ही हम, फिर सब ही बन है तुरक भरो।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गुरु गोविन्दसिंह जी कहते हैं—

सकल जगत में खालसा पंथ गाजै।
जगे धर्म हिन्दु सकल भंड भाजे।।

इन उद्धरणों से हम एक निष्कर्ष पर पहुँचे हैं। वह यह कि गुप्त काल के समय हिन्दू शब्द ईरानियों और मध्य एशिया के अन्य लोगों ने इसे दिया। इस देश के निवासियों ने इसे इस कारण स्वीकार किया, क्योंकि यह संस्कृत साहित्य में सप्त सिन्धु देश से मेल खाता था।

सिन्धु अथवा हिन्दू नाम मध्य एशिया वालों ने तो इस कारण दिया था, क्योंकि यह सिन्धु नदी के पूर्व में बसा हुआ देश है, परन्तु भारत के रहने वालों ने इसे इस कारण स्वीकार किया था कि यह सात महान् एवं पवित्र नदियों का देश था। सिन्धु केवल सिन्ध नदी का ही नाम नहीं, वरंच यह किसी भी महान् नदी का नाम हो सकता है। इस देश के रहने वाले पूजा-तर्पण के समय अपना परिचय इस प्रकार देते हैं—

गंगे च यमुने चैव गोदावरिं सरस्वति।
नर्मदे सिंधु कावेरिजलेऽस्मिन् सन्निधिं कुरु।।

यह पूर्ण देश की सात नदियों का देश माना जाता था। यह है सप्त सिन्धु।

हमारा यह निश्चित मत है कि मध्य एशिया वालों से दिया गया नाम भारत में स्वीकार न होता, यदि यह नाम सप्त सिन्धु के रूप में पहले ही विद्यमान न होता।

उक्त उद्धरणों से एक बात और स्पष्ट होती है कि महाभारत लिखे जाने से पूर्व इस देश का नाम भारत था। तभी तो व्यास जी के ग्रन्थ का नाम महाभारत हुआ था; परन्तु देश के रहने वालों को तब भी भारती के नाम से सम्बोधित नहीं किया जाता था। किसी भी प्राचीन ग्रन्थ में भारत के रहने वाले का नाम भारती दिखायी नहीं देता।

यह नहीं कि भारती शब्द था ही नहीं। हमारा यह मत है कि इस शब्द के प्रयोग का प्रयत्न किया गया था, परन्तु यह शब्द व्यापक रूप में संस्कृत वाङ्मय में स्वीकार नहीं किया गया।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विष्णु पुराण में भारती शब्द का प्रयोग हुआ है, परन्तु ऐसा प्रतीत होता है कि विष्णु पुराण सातवीं शती ईसा के काल का लिखा हुआ ग्रन्थ है। प्रायः पुराण तीसरी-चौथी शती ईसा से लेकर सातवीं-आठवीं शती ईसा के भीतर के काल में लिखे गये हैं। इनमें से कइयों में शंकर का मायावाद और बौद्ध अवतार का उल्लेख आता है। विष्णु पुराण में एक स्थान पर लिखा हैः–

उत्तरं यत् समुद्रस्य हिमाद्रेश्चैव दक्षिणम्।
वर्ष तद् भारतं नाम भारती यत्र संतति।।

अर्थात्–भारत में रहने वाली जाति भारती है।

परन्तु यह नाम प्रचलित नहीं हो सका। जब देश भारत था, तब यहां रहने वाले आर्य थे और पीछे लोगों ने इस देश के रहने वालों को भारती प्रचारित करने का यत्न किया, परन्तु उसी समय हिन्दू नाम भी प्रसिद्ध होने लगा था। हिन्दू नाम की कितनी प्रसिद्धि हुई, यह हम ऊपर लिख आये हैं। कश्मीर से लेकर कावेरी तक पूर्ण देश के लोग अपने को हिन्दू नाम से प्रसिद्ध करने लगे थे।

अतः हमारा यह मत है कि उस विशाल जाति का नाम जो हिमालय से समुंद्र तक देश में बसी हुई है और सात नदियों के देश में रहती है, हिन्दू है।

दो

आर्य अथवा भारती

वेदों में आर्य शब्द का प्रयोग हुआ है, परन्तु यह शब्द उन ग्रंथों में जातिवाचक नहीं था। तब जाति मानव थी। आर्य एक प्रकार के व्यवहार का प्रतीक था। आर्य शब्द की मीमांसा के लिए एक विहंगम दृष्टि प्राचीन इतिहास पर डालनी पड़ेगी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हम आर्य शब्द और इसकी मीमांसा भारतीय शास्त्रों के आधार पर ढूँढना चाहते हैं। अतएव इसके लिये सहायक इतिहास का अध्ययन भी भारतीय परमपरा से ही करना होगा। यह परम्परा इस प्रकार अंकित की जा सकती है।

(1) ब्रह्म दिन उस काल का नाम है जो मूल प्रकृति में से जगत् की रचना आरम्भ होने से लेकर पूर्ण जगत् के पुनः मूल प्रकृति में लीन होने तक का है। यह काल 4,32,00,00,000 सौर वर्ष है।

(2) ब्रह्म दिन 14 मन्वन्तरों में विभक्त किया गया है। और इस समय सातवां मन्वन्तर काल जा रहा है।

(3) प्रत्येक मन्वन्तर में 71.58 चतुर्युगियां होती हैं और सातवें मन्वन्तर की यह अठाईसवीं चतुर्युगी जा रही है।

(4) वर्तमान चतुर्युगी में आज कलियुग है और कलियुग के 5103 वर्ष व्यतीत हो चुके हैं।

(5) सतयुग और त्रेता युग की सन्धि के समय पृथ्वी पर एक भीषण जल-प्लावन आया था, जिसमें पूर्व की अधिकांश सृष्टि विनष्ट हो गयी थी। इस प्लावन में जो लोग बचे थे, उनमें प्रमुख मनु थे जिनकी संतान चन्द्रवंशी और सूर्यवंशी राजा-महाराजा हुए।

(6) मनु एक नौका में चढ़ कर बचे थे और वह नौका हिमालय पर्वत की एक चोटी पर जाकर लगी थी। वहीं से वर्तमान मानव समाज की सृष्टि हुई है।

(7) मनु से पूर्व सतयुग में आर्य शब्द का प्रयोग न तो गुणों के अर्थों में और न ही किसी जाति (race) के अर्थों में हुआ था। मनु के उपरान्त ही इस शब्द का प्रयोग आरम्भ हुआ। ऐसा प्रतीत होता है कि मानव सृष्टि कैलाश पर्वत के समीप मानसरोवर के किनारे पर वृद्धि पाने लगी। ज्यों-ज्यों मानवों की संख्या बढ़ने लगी, त्यों-त्यों मनुष्य मानसरोवर के किनारे को छोड़कर वहां से निकलने वाली नदियों के किनारे-किनारे फैलने लगे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(8) इस क्षेत्र में सरस्वती, गंगा, यमुना, ब्रह्मपुत्र इत्यादि नदियां निकलकर हिमालय के दक्षिण के क्षेत्रों में आती हैं और मनु की सन्तान इनके किनारे-किनारे चलती हुई वर्तमान भारत देश में आ गयी। उस समय मनु की सन्तान चन्द्रवंशी और सूर्यवंशी कहलाती थी।

(9) हिमालयों के पठारों से उतरते हुए मानव ज्यों-ज्यों हिमालय के दक्षिण के मैदानों में आते गए, त्यों-त्यों ये उन मैदानों को नाम देते गए। मानसरोवर से सरस्वती के किनारे-किनारे चलते हुए वे पहले सरस्वती और दृष्टवती के मध्य के क्षेत्र में बसे। इसका नाम उन्होंने ब्रह्मवर्त देश रखा।

ब्रह्म देश की सीमायें मनुस्मृति में इस प्रकार लिखी हैं–

सरस्वतीदृषद्वत्योर्देवनद्योर्यदन्तरम्।
तं देवनिर्मितं देशं ब्रह्मावर्तं प्रचक्षते।। (मनु.-2-17)

(सरस्वती और दृष्टवती इन दो देव नदियों के मध्य जो देश है, उसे देवनिर्मित (देव नदियों से निर्मित देश) ब्रह्मवर्त देश कहते हैं।)

यह देश वर्तमान हिमाचल प्रदेश, सिरमौर, अम्बाला और आस पास का क्षेत्र था। ऐसा प्रतीत होता है कि इस समय भी, यहां आकर बसने वाले अपने को मानव और ब्रह्मा के पुत्र ही मानते थे। मनु अपने को ब्रह्मा की सन्तान घोषित करता था और ये उसकी ही सन्तान थे। इस समय भी आर्य शब्द जातिवाचक नहीं माना जाता था। यह गुणवाचक ही था।

यहां से इन लोगों की एक शाखा वर्तमान कुरुक्षेत्र और कुमायूँ तथा देव प्रयाग, ऋषिकेश, हरिद्वार इत्यादि, गंगा और यमुना के भीतर के क्षेत्रों में आकर बसी। सम्भवतयः ये लोग मानसरोवर से गंगा के किनारे-किनारे चलते हुए आये थे। इन्होंने अपने बसने वाले क्षेत्र का नाम ब्रह्मर्षि देश रखा। इसके विषय में मनुस्मृति में इस प्रकार लिखा है–

कुरुक्षेत्रं च मत्स्याश्च पञ्चालाः शूरनसेनकाः।
एष ब्रह्मर्षिदेशो वै ब्रह्मावर्त्तादनन्तरः।। (मनु.-2-19)

कुरुक्षेत्र, मत्स्य देश, पाञ्चाल और शूरसेन देश, ये क्षेत्र ब्रह्मर्षि देश तथा ब्रह्मावर्त्त के अनन्तर हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(11) ऐसा प्रतीत होता है कि कुछ लोग पूर्व और दक्षिण की ओर बढ़े। वे हिमालय और विन्ध्याचल के बीच बस गये। उस क्षेत्र, जहां सरस्वती रेगिस्तान में विलुप्त हुई (राजस्थान) थी, से आरम्भ कर उस देश तक जहां गंगा, यमुना का संगम है, (अर्थात् प्रयाग तक) ये लोग बस गये और देश का नाम मध्य देश रखा। इसके विषय में मनुस्मृति में लिखा है—

हिमवद्विन्ध्योर्मध्ये यत्प्राग्विनशनादपि।
प्रत्यगेव प्रयागाच्च मध्यदेशः प्रकीर्तितः।। (मनु.-2-21)

(हिमालय और विन्ध्याचल पर्वतों के बीच और सरस्वती के लोप होने के स्थान से लेकर प्रयाग तक के क्षेत्र को मध्य प्रदेश कहा गया।)

(12) इससे भी आगे, दक्षिण की ओर, दो समुद्रों के बीच जो पूर्व और पश्चिम में हैं, और उन दो पर्वतों के बीच के क्षेत्र को विद्वान् लोग आर्यावर्त देश कहते हैं। इसे मनुस्मृति में इस प्रकार लिखा है—

आसमुद्रात्तू वै पूर्वादासमुद्रात्तू पश्चिमात्।
तयोरेवान्तरं गिर्योरार्यावर्तं विदुर्बुधाः।।
(मनु.—2-22)

(पूर्व के समुद्र से पश्चिम के समुद्र तक और उनके भीतर पर्वतों के देश को आर्यावर्त देश कहते हैं।)

मनुस्मृति के कुछ टीकाकार इस देश को गंगा, यमुना की वादी कहते हैं। हमारा उनसे मतभेद है। गंगा-यमुना की वादी का तो मध्य प्रदेश में उल्लेख आ गया है। राजस्थान से प्रयाग तक और हिमालय तथा विन्ध्याचल के भीतर का देश मध्य देश कहा गया है। पुनः उसी का दूसरा नाम आर्यावर्त रखने में कुछ कारण नहीं था। इसके अतिरिक्त गंगा-यमुना की वादी के पूर्व और पश्चिम में सागर नहीं है। पूर्व का सागर तो बर्मा तथा इण्डोचाइना पार कर प्रशान्त महासागर ही है और पश्चिम में राजस्थान, गुजरात और काठियावाड़ पार कर अरब सागर है। परन्तु न तो गंगा-यमुना क्षेत्र वहां तक फैला हुआ है और न ही उन देशों को आर्यावर्त देश कहा गया है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मनुस्मृति (2-22) के अनुसार आर्यावर्त क्षेत्र वह है जो अरब सागर और बंगाल की खाड़ी के मध्य में है। यह वह क्षेत्र है जिसमें मैसूर, महाराष्ट्र, आन्ध्र प्रदेश, वर्तमानं तमिलनाडु और कुछ क्षेत्र केरल राज्य का आता है। इधर उड़ीसा का भी कुछ क्षेत्र इसमें आ जाता है।

श्लोक में यह लिखा है कि जिसके पूर्व और पश्चिम में समुद्र है, (तयोरेवान्तर) उनके भीतर, तयो (गिर्योः) दो पर्वतों के बीच का देश आर्यावर्त देश है।

'तयो' शब्द से उन अर्थात् उन सागरों के बीच अभिप्रेत है। ये हिमालय और विन्ध्याचल नहीं हो सकते। कम से कम वर्तमान भारत के मानचित्र से यह ठीक नहीं बैठते।

हमारा यह मत है कि आर्यावर्त देश दक्षिण पठार का नाम था। पूर्व का सागर अरब सागर और पश्चिम का सागर बंगाल की खाड़ी है और उनके भीतर दो पर्वत, मालाबार पर्वत श्रृंखला और कारो-मण्डल पर्वत श्रृंखला हैं।

उक्त पूर्ण विवेचना से हमारा अभिप्राय यह है कि जब मनु की सन्तान हिमालय की घाटियों से सरस्वती, गंगा और यमुना के किनारों के साथ-साथ चलते हुए वर्तमान भारत के मैदानों में आयी तब यह आर्य केवल गुणों के कारण मानी जाती थी। उस समय आर्य कोई जाति नहीं थी। जब ये लोग चलते-चलते दक्षिण पठार में जाकर बसे, तब इन्होंने अपने देश का नाम आर्यावर्त रखा और तब वहां के रहने वाले आर्य हो गये।

आर्य शब्द जातिवाचक तो बना, परन्तु वेदों में तथा महाभारत और रामायण काल में यह शब्द गुणवाचक ही था।

अतः हमारा यह कहना है कि इस देश के, जब यह भारत था, रहने वाले मानव (मनु की सन्तान) सूर्यवंशी, चन्द्रवंशी एवं आर्य नाम से जाने जाते थे। इन नामों को एक करने के लिए भारत शब्द का निर्माण किया गया, परन्तु यह कुछ अधिक प्रचार नहीं पा सका। देशव्यापी नागरिकों का, जातिवाचक नाम एक हिन्दू ही दृष्टिगोचर होता है। इस सब में कारण है।

उसके लिए इतिहास का एक अन्य पृष्ठ उलटना होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तीन

चक्रवर्ती राज्य और साम्राज्य

प्राचीन काल में भी देश में ऐक्य था। भारत भूमि पर कितने ही राज्य थे। रामायण कथा काल में भी और महाभारत कथा काल में भी छोटे-छोटे कई राज्य थे। राज्य के विचार से तथा देशों के विचार से, यह क्षेत्र जो हिमालय से सागर पर्यन्त और सिन्धु नदी से ब्रह्मपुत्र नदी तक फैला हुआ था, कई देशों में विभक्त था। परन्तु देश, राष्ट्रीयता की दृष्टि से एक था।

यह एक देश था धर्म और संस्कृति के विचार से। इन दोनों शब्दों का अर्थ हम अगले अध्यायों में स्पष्ट करेंगे। यहां इतना समझ लेना चाहिये कि विचार और आचरण की दृष्टि से हिमालय से समुद्र पर्यन्त देश एक था।

विष्णु पुराण का एक श्लोक हमने ऊपर दिया है, जिसमें कहा है कि हिमालय से लेकर समुद्र तक जो देश है, वह भारत है। इसको संस्कृति और धर्म की दृष्टि से ही एक कहा जाता था। जितने भी राज्य इस भूमि पर थे, उनके रहने वालों की संस्कृति और धर्म एक समान था।

यह नहीं कि लाखों वर्ष के इतिहास में यह स्वयमेव ऐसा रहा था स्वयमेव रहना सम्भव नहीं था। यह मानव प्रकृति है कि बिना पथ-प्रदर्शन के यह ठीक मार्ग पर नहीं चल सकती। इसके पथ-प्रदर्शन के लिये देश के सब राज्यों में विद्वानों की महिमा थी और उनको एक राज्य से दूसरे राज्य में जाने पर किसी प्रकार का प्रतिबन्ध नहीं था। विद्वानों एतदर्थ सबके लिये राज्यों की सीमाएं बाधा नहीं थीं। देश में तीर्थ स्थानों पर से, जहां देश भर के यात्री और साधु, सन्त, महात्मा आते थे विचार प्रसार होता था।

महाभारत में और बाल्मीकीय रामायण में ऐसे तीर्थ स्थानों का उल्लेख है जहां ऋषियों, पण्डितों और यात्रियों के आने-जाने में राज्य बाधक नहीं थे। विद्वानों को अपने विचार, कर्म और मोक्ष साधन के उपायों के प्रचार में पूर्ण स्वतन्त्रता रहती थी।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Central Library
Gurukul Kangri (Deemed to be University) Haridwar
167954
R089.9143
GUR-B
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस पर भी कभी-कभी राज्य इस संस्कृति और बौद्धिक प्रवाह में बाधक हो जाते थे। तब देश के विद्वान् लोग देश में किसी राजा को चक्रवर्ती राज्य पद दिलाते थे और उस चक्रवर्ती राजा द्वारा देश में धर्म एवं संस्कृति के पुनः ऐक्य रस होने में यत्न कराते थे।

रामायण काल में ऐसी स्थिति उत्पन्न हो गयी थी कि राक्षसराज रावण उत्तरी भारत की वैदिक संस्कृति को विनष्ट करने में लग गया था। रावण ने अपनी सीमान्त छावनी विन्धयाचल के पार्श्व में दण्डकारण्य में स्थापित कर दी थी। छावनी को जनस्थान के नाम से बाल्मीकीय रामायण में लिखा है। इस छावनी से राक्षस पूर्ण दण्डकारण्य में फैल रहे थे और वहां रहने वाले ऋषियों, मुनियों की मारकाट कर रहे थे।

राम जब वनों में घूमते हुए शरभंग मुनि के आश्रम में पहुंचे तो वहां इन्द्र पहले ही पहुंचा हुआ था। इन्द्र के साथ अन्य बहुत से देवता थे।

ऐसा प्रतीत होता है कि राक्षसों के अत्याचार से पीड़ित शरभंग ऋषि ने इन्द्र से रक्षा की प्रार्थना की होगी। इन्द्र के आने के समय शरभंग ऋषि मृत्यु को प्राप्त होने वाला था। ऋषि ने इन्द्र को अपनी बात बतायी कि वह परम धाम को जा रहा है। उसके पीछे आश्रमवासी राक्षसों से मारे जायेंगे। इनकी रक्षा की जाये।

इन्द्र ने शरभंग मुनि से कहा कि इस आश्रम में अयोध्या नरेश दशरथ के पुत्र राम आ रहे हैं। वे ही यह महान् कार्य में समर्थ हैं।

जितवन्तं कृतार्थं हि तदाहमचिरादिमम्।
कर्म ह्यनेन कर्तव्यं महदन्यैः सुदुष्करम्।।

(वा. रा.-अरण्य. 5-23)

वह इस कार्य को करेंगे। यह कार्य दूसरों द्वारा सम्पन्न होना बहुत कठिन है। जब वे अपना कर्त्तव्य पालन कर लेंगे, तब मैं इनसे मिलने आऊँगा।

इन्द्र उस समय राम से इस कारण नहीं मिले थे, क्योंकि वे रावण के पुत्र मेघनाथ से पराजित होकर रावण से संधिबद्ध थे।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जब इन्द्र चला गया और शरभंग ऋषि ने प्राण त्याग दिये तो ऋषियों ने राम से अपने कष्ट वर्णन किये और कहा–

ततस्त्वां शरणार्थं च शरण्यं समुपस्थिताः।
परिपालय नो राम वध्यमानान् निशाचरैः।।
(वा. रा.-अरण्य. 6-19)

आज इन राक्षसों से बचाये जाने के लिये आपकी शरण में हम आये हैं। आप शरण वत्सल हैं। अतः इन निशाचरों से हमें बचाइये।

राम ने रावण का वध किया और विन्ध्याचल से लेकर रामेश्वरम् तक पूर्ण क्षेत्र को राक्षसों के अत्याचार से मुक्त किया। राज्य तो राक्षस राजा के भाई का ही रहा, परन्तु वह संस्कृति पराजित हुई जिसके प्रहरी खर तथा दूषण दण्डकारण्य में आ बैठे थे।

राम ने अश्वमेध यज्ञ किया। तब भी ऋषि द्वारा प्रेरणा पाकर ही ऐसा किया गया था। वैसे राम तथा दशरथ के समय में, अश्वमेध यज्ञ के उपरान्त भी अनेक राजा और राज्य थे।

चक्रवर्ती राजा का प्रयोजन देश के उन राज्य्रों में, जहां धर्म और संस्कृति का लोप होने लगता था, व्यवस्था स्थापित करना होता था। जो अनुकूल राज्य होते थे, उनको तो साधारण भेंट लेकर शांतिपूर्वक रहने की स्वीकृति मिल जाती थी।

चक्रवर्ती राजा बनने के लिए यह आवश्यक नहीं था कि वह किसी बड़े राज्य का राजा हो। वह, जो सब राज्यों से अधिक शक्ति-शाली होता था और धर्म तथा संस्कृति की स्थापना में समर्थ होता था, विद्वान तथा ऋषिगण उसको ही अश्वमेध यज्ञ करने की प्रेरणा देते थे।

यही बात युधिष्ठिर के राजसूय यज्ञ के समय हुई थी। हस्तिनापुर का छोटा-सा राज्य था और नारद युधिष्ठिर की धर्म-परायणता देख उसके पास आया और उससे कहने लगा कि उसे राजसूय यज्ञ करना चाहिये। ऐसा कहने से पूर्व नारद ने युधिष्ठिर से कई प्रश्न पूछे। इन प्रश्नों से उसने यह जानने की चेष्टा की कि उसकी शक्ति कितनी है? उसके पास धन

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

कितना है? उसकी प्रजा उससे सुखी है अथवा नहीं? वह राज्य-संचालन किस प्रकार करता है? इत्यादि। जब नारद युधिष्ठिर के उत्तरों से सन्तुष्ट हो गया, तब उसने उसे राजसूय यज्ञ करने की प्रेरणा दी।

अभिप्राय यह है कि जब विद्वान् लोग देश में धर्म एवं संस्कृति एक रखने में किसी राज्य द्वारा बाधा उपस्थित की जाती देखते थे, तब वे किसी धर्मात्मा राजा को चक्रवर्ती राजा बनने की प्रेरणा देते थे।

परन्तु चन्द्रगुप्त मौर्य के काल से प्रथा बदली। इस समय आचार्य चाणक्य की नीति चक्रवर्ती राज्यों के निर्माण के स्थान साम्राज्य स्थापित करने की हो गयी। चक्रवर्ती राज्य तो केवल धर्म और संस्कृति को चालना देते थे और 'साम्राज्यवाद' में पूर्ण देश में एकाकी सत्ता स्थापित करना उद्देश्य होता था। इसमें सम्पूर्ण राज्य कार्य एक राजा द्वारा चलाने की बात निहित थी।

यदि आजकल के काल की भाषा में बात करें तो यह इस प्रकार है कि चक्रवर्ती राज्य एक प्रकार की 'फैडरल स्टेट' होती थी और साम्राज्यवाद 'ऐम्पायर'। चन्द्रगुप्त ने 'फैडरल स्टेट' की प्रथा को पसन्द नहीं किया। उसने पाटलिपुत्र की 'ऐम्पायर' निर्माण की।

चक्रवर्ती राज्यों में राज्य राजनीतिक दृष्टि से स्वतन्त्र रहते थे और केवल धर्म तथा संस्कृति की दृष्टि से चक्रवर्ती राजा के आदेश पर आचरण करते थे। चक्रवर्ती राजा भी विद्वानों और ऋषियों के आदेश पर आचरण करता था, परन्तु साम्राज्यवाद की प्रथा में राज्य स्वतन्त्र नहीं रह सकते थे, न राजनीतिक दृष्टि से और न सांस्कृतिक एवं धर्म की दृष्टि से। सबको सम्राट की आज्ञा माननी पड़ती थी।

इस वृत्तान्त से यह स्पष्ट हो गया है कि जब देश में अनेक राज्य थे तब भी देश में एक राष्ट्र था। पूर्ण देश में विद्वान् लोग भ्रमण कर सकते थे और धर्म एवं सांस्कृतिक समानता उत्पन्न करते रहते थे। यदि कोई राज्य इस सांस्कृतिक प्रवाह में बाधा डालता था, तो चक्रवर्ती राजा उस राज्य को सन्मार्ग दिखा देता था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चार

राष्ट्र का स्वरूप

राष्ट्र के स्वरूप का वर्णण वेद में मिलता है। यह इस प्रकार है–

आ ब्रह्मन् ब्राह्मणो ब्रह्मवर्चसी जायतामा राष्ट्रे राजन्यः शूर ऽइषव्योऽतिव्याधी महारथो जायतां दोग्ध्री धेनुर्वोढानड्वानाशुः सप्तिः पुरन्धिर्योषा जिष्णू रथेष्ठाः सभेयो युवास्य यजमानस्य वीरो जायतां निकामे-निकामे नः पर्जन्यो वर्षतु फलवत्यो न ऽ ओषधयः पच्यन्तां योगक्षेमो नः कल्ताम्।। यजु. 22-22।।

(1) इस मन्त्र में परमात्मा से प्रार्थना की गयी है। कहा है, हे परमेश्वर! हमारे राष्ट्र में ब्राह्मण (वेद के जानने वाले), (ब्रह्मवर्चसी) तेजवान विद्वान् (जायतामा) उत्पन्न हों।

(2) (राष्ट्रे राजन्यः शूर) राष्ट्र में शूरवीर क्षत्रिय उत्पन्न हों। (इषव्यः अति व्याधी) अति वेग से शत्रु को परास्त करने वाले धनुर्धर (महारथी) सेनापति (जायतां) उत्पन्न हों।

(3) (दोग्ध्री धेनुर्वोढान) बहुत दूध देने वाली गउएँ, बलवन्त बैल (वानाशुः सप्तिः) अति वेग से जाने वाले घोड़े हों।

(4) (योषा पुरन्धिः) कुटुम्ब को धारण करने में समर्थ स्त्रियाँ, (जिष्णू रथेष्ठाः) वीर विजयी पुरुष, रथों (अस्य यजमानस्य सभेयः युवा) यजमानों के युवा और साधु उत्तम वक्ता पुरोहित (जायतां) उत्पन्न हों।

(5) (नः निकामे-निकामे) हमें जब-जब आवश्यकता हो (पर्जन्यो वर्षतु) मेघ बरसें। (नः फलवत्यो न औषधयः) हमारे लिये फल-फूल वाले वृक्ष-पौधे हों। (पच्यन्ताम्) पका हुआ अन्न हो। (नः योगक्षेमो कल्ताम्) धन-धान्य से भण्डार भरपूर रहें।

इस प्रकार हम देखते हैं कि वेद के अनुसार राष्ट्र में पांच तत्त्व माने गये हैं–

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(1) विद्वान् ब्राह्मण।

(2) शूरवीर क्षत्रिय। शत्रु को परास्त करने में सामर्थ्यवान्, दूर से निशाना लगाने वाले योद्धा और सेना संचालन करने में योग्य सेनाध्यक्ष!

(3) बहुत दूध देने वाली गउएँ, बलवान् बैल और अति वेग से भागने वाले घोड़े (वाहन)।

(4) स्वस्थ, सबल, उर्वरा स्त्रियां और उनसे सन्तान उत्पन्न करने वाले वीर एवं सम्पन्न पुरुष। पुरुष यजमान हों और उनके पुरोहित साधु स्वभाव, उत्तम वक्ता और युवा हों।

(5) देश में ठीक समय पर (जब आवश्यकता हो) वर्षा हो और उससे फल और पुष्प वाले पेड़-पौधे उत्पन्न हों। पका अन्न प्रचुर मात्रा में हो और सब धन-धान्य से सम्पन्न हों।

यह है राष्ट्र का स्वरूप जो वेद में वर्णित है। कहते हैं कि युग ने बहुत उन्नति कर ली है और वेद किसी पिछड़े युग के ग्रंथ हैं। हमारे विचार में वैदिक व्यवस्था आज की अपेक्षा अति श्रेष्ठ थी।

भारत में वेद सत्य ज्ञान के ग्रंथ माने जाते हैं। अतः सत्य ज्ञान के जानने वाले राष्ट्र का आवश्यक अंग हैं। यदि इस दृष्टि से देखा जाए तो यह कहना होगा कि राष्ट्र में सत्य विद्याओं की शिक्षा का एक समान प्रबन्ध होना चाहिए। जो भी देश की इकाई हो, चाहे वह राजनीतिक इकाई हो, चाहे किसी अन्य प्रकार की, सत्य ज्ञान के प्रसार में बाधक नहीं हो सकती। यदि वह है तो वह राष्ट्र का अंग नहीं रखी जा सकती।

उदाहरण के रूप में भाषा का प्रश्न है। ज्ञान भाषा के वाहन पर चढ़कर चलता है। यदि कोई समुदाय किसी एक वर्ग में अथवा किसी एक क्षेत्र में दोषपूर्ण भाषा चलाने का हठ करे, तो वह समुदाय ज्ञान में बाधक होता है। मान लीजिए, भारत में कोई राज्य उर्दू, अंग्रेजी अथवा अन्य घटिया भाषा चलाने का हठ करे और उन्नत भाषाओं के चलन को रोके तो निःसंदेह वह राष्ट्र के स्वरूप को बिगाड़ने वाला माना जायगा।

राष्ट्र के स्वरूप को बिगाड़ने का प्रथम प्रयत्न अंग्रेजी चालू रखने और

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसे शिक्षा का माध्यम बनाने से किया गया। यदि विद्यार्थी को जीवन के चौदह-पन्द्रह वर्ष तक भाषा सीखने में लग जायें, तो वह वास्तविक ज्ञान किस समय प्राप्त करेगा ?

अंग्रेज़ी भाषा भली प्रकार सीखने के लिए एक विद्यार्थी को तीन घण्टे व्यय करने पर भी जीवन के दस से ग्यारह वर्ष व्यय करने लग जाने सहज हैं। यदि घण्टों की गणना की जाये तो ये ग्यारह हजार के लगभग घण्टे बनते हैं। एक हिन्दुस्तानी विद्यार्थी, हिन्दी सीखने में एक घण्टा नित्य व्यय करने पर पाँच-छः वर्ष में अच्छी हिन्दी सीख सकता है। यह लगभग दो सहस्त्र घण्टे बनते हैं। भाषा भली-भांति आ जाये तो ज्ञान प्राप्त करने में अतीव सुविधा होती है। देश में जहां विद्यार्थियों के घरों में बोलचाल की भाषा हिन्दी है, वहां अंग्रेजी माध्यम बनाने का हठ करना राष्ट्र- घातक है।

भाषा में लिपि और उच्चारण आवश्यक अंग हैं। जिस भाषा की लिपि त्रुटिपूर्ण है, अपूर्ण है और सुगमता से समझी जाने के योग्य नहीं, वह भाषा लंगड़ी हो जाती है। लिखने वाला लिखता कुछ है, बोलने वाला बोलता कुछ है और समझने वाला भ्रम में फंसा रहता है।

क्या ही अच्छा होता कि संविधान सभा सन् 1947 में ही भाषा विज्ञान के जानने वालों की एक कमेटी बना देती और उसके निर्णयों को स्वीकार कर लेती। देवनागरी, लिपि स्पष्टता, सुगमता और पूर्णता में वर्तमान युग की किसी भी भाषा से श्रेष्ठ सिद्ध हो सकती थी, परन्तु भाषा के प्रश्न पर वे विचार कर रहे थे, जो जवाहर लाल जी जैसे केवल एक भाषा के ज्ञाता थे और देवनागरी लिपि से अनभिज्ञ थे। परिणामस्वरूप भाषा और शिक्षा के प्रश्न को व्यवहार में लाने के लिए नियुक्त हो गये मौलाना अबुल कलाम आज़ाद। ये महानुभाव राष्ट्र की प्रथम आवश्यकता, अर्थात् सत्य ज्ञान के विद्वान निर्माण करना, के विषय में सर्वथा अनभिज्ञ थे। इन्होंने अपनी शक्ति का प्रयोग उन विद्वानों को धक्के दे देकर राज्य कार्य-भार से पृथक् करने में प्रयोग किया जो अंग्रेजी के स्थान पर हिन्दी लाना चाहते थे। जवाहरलाल नेहरू जी का बाबू पुरुषोत्तम दास टण्डन के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ व्यवहार, मौलाना आज़ाद साहब का हिन्दी को शिक्षा का माध्यम बनाने में बाधायें उपस्थित करते रहना तथा अन्य कांग्रेसी नेताओं का चौदह वर्ष तक इनको अपने सिर पर बैठा रखना, राष्ट्र-द्रोह ही था।

यहां हम राष्ट्र-द्रोह के अर्थों को स्पष्ट कर दें। राष्ट्र का आशय उक्त पांच बातें हैं जो वेद में लिखी हैं। ये पाँच बातें यद्यपि राजनीति की मूल में रहती हैं, परन्तु ये राजनीति नहीं हैं। अतः योग्य अर्थ-व्यवस्था रखने वाला राजनीतिक शासक भी उक्त किसी भी एक बात का विरोधी होने से राष्ट्र-द्रोही हो सकता है। हमारे विचार में भारत में अंग्रेज़ी को शिक्षा का माध्यम बनाये रखने वाले राष्ट्र विरोधी थे और हैं। इन लोगों ने अंग्रेज़ी भाषा को शिक्षा का माध्यम बनाये रखने में किसी भाषा के विशेषज्ञ की सम्मति नहीं ली। इन्होंने अपने राजनीतिक स्वार्थ सिद्ध करने के लिए राष्ट्र के ज्ञानवान होने में बाधा खड़ी की है। ये राष्ट्र-द्रोही हैं। राष्ट्र के विषयों में राजनीतिक स्वार्थों को ला खड़ा करना, महान् पाप हुआ है।

भारत के वर्तमान संयुक्त राज्य के ढांचे (Federal Constitution) में शिक्षा केन्द्र का विषय होना चाहिए था। जो लोग आज राष्ट्र-ऐक्य के लिए हिन्दू राष्ट्र की निन्दा करते हैं, वे ही भाषा और शिक्षा के विषयों को राज्यों का विषय बनाये हुए हैं। वे न तो राष्ट्र के अर्थ को समझते हैं और न ही एक राष्ट्र-निर्माण के इच्छुक हैं।

आदिकाल से लेकर मुसलमानों के राज्य तक देश की एक सम्पर्क भाषा थी। वह थी संस्कृत भाषा। देश के विद्वानों की एक मात्र भाषा संस्कृत थी। राष्ट्र-ऐक्य की कूक लगाने वाले 'राजनीतिज्ञ' देश की चौदह भाषायें बनाने जा रहे हैं। भला एक राष्ट्र कैसे बनेगा?

राष्ट्र का दूसरा गुण है शूरवीर क्षत्रीय, द्रुत गति से ले चलने वाले वाहन, धनुर्धर (perfect marksmen) सैनिक, अस्त्र-शस्त्र और अति योग्य सेनानायक।

भारत में सेना केन्द्र के अन्तर्गत है, परन्तु राज्य अपने-अपने क्षेत्र में क्षेत्रीय सेनायें (state forces) तैयार कर रहे हैं। एक राष्ट्र को रखने के लिए पूर्ण देश के क्षत्रिय वर्ग एक संगठन में रहना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इस विषय में कोई त्रुटि हम यहां लिख नहीं सकते। इसकी परीक्षा तो देश पर आक्रमण के समय हो सकती है। भारत के स्वराज्य काल में देश पर चार बार आक्रमण हुआ है। तीन बार पाकिस्तान ने आक्रमण किया है और एक बार चीन ने। इन चारों बार भारत की सैनिक तैयारी त्रुटिपूर्ण सिद्ध हुई है। परम्परा से भारतीय युवक वीर और निर्भय योद्धा सिद्ध हुए हैं, परन्तु सरकार ने जो अस्त्र-शस्त्र उनके हाथ में दिए हुए थे, वे पुराने ढंग के और कम शक्तिशाली थे।

अब कहा जा रहा है कि भारत की सैनिक शक्ति सर्व प्रकार से समयोचित है।

कुछ भी हो, सिद्धान्त यह है कि राष्ट्र में वीर बुद्धिमान योद्धा हों। राष्ट्र में वाहन और शस्त्रास्त्र सर्वश्रेष्ठ हों और सेनानायक बुद्धिमान और सामर्थ्यवान हों। यह राष्ट्र का दूसरा गुण है।

राष्ट्र की तीसरी आवश्यकता है देश की सम्पन्नता। देश में दूध-घी, अन्न-अनाज की, पशु धन की कमी न हो। यह समझ लेना चाहिये कि विज्ञान में अत्यन्त उन्नति होने पर भी, भोज्य पदार्थों में हम प्रकृति पर निर्भर हैं। दूध और घी का स्थानापन्न अभी तक नहीं ढूँढा गया। यदि कृत्रिम गाय बन सकती, तब भी वैसी गउएं स्वीकार कर ली जातीं, परन्तु कृत्रिम गाय बनी नहीं। दूध-घी का स्थानापन्न अभी मिला नहीं। अतः अच्छी गउँए और मजबूत बैल बढ़ाना राष्ट्रीय कार्य है। जो राष्ट्र यह कार्य नहीं करता, वह राष्ट्रद्रोह करता है। देश में गो-हत्या पर नियन्त्रण न रख सकना, राष्ट्रद्रोह ही है।

वेद मन्त्र में वेगवान घोड़ों के लिये प्रार्थना की गयी है। घोड़ों का स्थानापन्न मोटरकार, हवाई जहाज़ इत्यादि वाहन निर्माण हो गये हैं, परन्तु राष्ट्र के स्वरूप में अन्तर नहीं आया। घोड़े के स्थान यान्त्रिक वाहन निर्माण किये जा सकते हैं, परन्तु ये होने चाहियें प्रचुर संख्या में और अधिक से अधिक लोगों के पास। यह प्रबन्ध होना चाहिये कि वाहन कम से कम मूल्य पर मिल सकें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राष्ट्र का चौथा स्वरूप है—राष्ट्र में सन्तान उत्पन्न करने वाली स्त्रियां बहुत बड़ी संख्या में हों। वे बच्चे उत्पन्न कर सकें और उनके पालन-पोषण का प्रबन्ध कर सकें। इस स्वरूप को नष्ट-भ्रष्ट करने में तो भारत देश सिर तोड़ यत्न कर रहा है। करोड़ों रुपये स्त्रीवर्ग को बांझ बनाने में व्यय किये जा रहे हैं। यह राष्ट्र-द्रोह हो रहा है।

न केवल (योषा पुरन्धिः) सन्तान उत्पन्न करने वाली और पालन करने वाली स्त्रियाँ राष्ट्र का अंग हैं, वरन् धनी-मानी वीर पुरुष भी होने चाहिएँ जो उन स्त्रियों के पति हों और सन्तान उत्पन्न करने तथा उनके पालन-पोषण में समर्थ हों। इस दिशा में भी भारत पिछड़ रहा है।

वासनामय चलचित्र, साहित्य और पहरावे द्वारा उत्तेजना उत्पन्न करने वाली प्रवृत्ति निर्माण की जा रही है। यह सर्वविदित है कि विषयों के चिन्तन से कामनाओं की उत्पत्ति होती है और इससे वीर्य क्षीण होता है। इसका भावी सन्तान पर भारी प्रभाव पड़ता है।

वे समाजवादी जो व्यक्ति की प्रत्येक गतिविधि को समाज के हित पर निछावर करना चाहते हैं, वे वासनामय जीवन की खुली छूट देने के लिए तैयार रहते हैं। वासनामय जीवन निःसंदेह समाज के अहित में होता है।

राष्ट्र का पांचवा स्वरूप है कि जब-जब आवश्यकता हो, वर्षा तथा अन्य प्राकृतिक उपलब्धियां प्राप्त हों, जिससे अन्न, फल-फूल प्रचुर मात्रा में मिलें।

वर्तमान घोषणा यह है कि प्रकृति से स्वतन्त्रता प्राप्त की जाये। यह सम्भव नहीं। इस कारण राष्ट्र के पाँचवें स्वरूप में समय पर वृष्टि के लिए याचना की गई है।

यह ठीक है कि भारी संख्या में नलकूप (tube well) लगा लेने से एक सीमा तक वृष्टि से स्वतन्त्रता प्राप्त होती है, परन्तु भूम्यान्तर्गत जल भी तो वर्षा का जल ही होता है। वह एक प्रकार से जल का भण्डार है जो वर्षा से ही भरता है। नलकूपों से हम उस भण्डार का लाभ उठा रहे हैं। यदि वह भण्डार नियम से वर्षा से भरता नहीं रहेगा, तो वह भी मनुष्य के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

लिये उपलब्ध नहीं रहेगा। अतः भूमि पर जल जो वर्षा से ही आता है, के लिए वेद प्रार्थना करता है।

यहां प्रश्न यह उपस्थित होता है कि वेद ने तो परमात्मा से प्रार्थना की है। इसमें लोग क्या कर सकते हैं? जो परमात्मा में विश्वास रखते हैं वे उससे प्रार्थना करते रहें। मनुष्य तो अपने विचारित मार्ग पर ही चलेगा।

वेद में परमात्मा से प्रार्थना इस कारण की गयी है कि वेद मत से सब कुछ, जो पुरुषार्थ से भी प्राप्त होता है, वह भी परमात्मा की कृपा का ही फल है। वेद की शैली को न समझ सकने से ही यह प्रश्न उठाया गया है। वेदार्थ समझाने वाले महर्षि शौनक ने अपने बृहद्देवता नामक ग्रंथ में यह लिखा है :

स्तुवद्भिर्वा ब्रुवद्भिर्वा ऋषिभिस्तत्वदर्शिभिः।
भवत्युभयमेवोक्तम् उभयं ह् यर्थतः समम्।।

(बृ.दे.-1-10)

अर्थात्—वेदों में स्तुति ज्ञान-वार्ता जो भी हो, उसे तत्त्वदर्शी ऋषि एक ही बात कहते हैं। दोनों समान हैं। अर्थात् जहाँ स्तुति के रूप में बात की गई है, वह भी ज्ञान की बात समझनी चाहिए।

अतः जब राष्ट्र के लिए परमात्मा से प्रार्थना की गई है तो इसका अर्थ राष्ट्र के स्वरूप का वर्णन ही है। ऐसा ही राष्ट्र मनुष्य निर्माण करें।

वेदों में राष्ट्र का स्वरूप एक सार्वभौमिकता और सार्वकालीन आवश्यकता है। चाहे तो राज्य केन्द्र-सत्ता प्रधान हो और चाहे विखण्डित सत्तायुक्त हो। राष्ट्र का सम्बन्ध उससे नहीं है। राष्ट्र देश के विद्धानों द्वारा निर्माण करने की बात है। इसमें राज्य केवल यह कर सकता है कि विद्वानों को धन तथा सुविधायें प्राप्त कराये। इस पर भी यह कार्य मुख्य रूप में उनका ही है। विद्वान् वेद शास्त्र से नियन्त्रित रहते हैं, न कि राज्य की आवश्यकता से।

अभिप्राय यह है कि राष्ट्र के उक्त पांच गुणों के निर्माण में समाज के विद्वानों का उत्तरदायित्व है। राज्य तो केवल व्यवस्था (law & order) और सुरक्षा (defence) का कार्य करे। राष्ट्र कार्य का सम्बन्ध राजनीति

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

से न हो। राजनीति एक बदलता हुआ चित्र है। इसके साथ राष्ट्र कार्य बाँध देने से राष्ट्र का स्वरूप नष्ट-भ्रष्ट हो जायेगा। राज्य राष्ट्र से जीवन प्राप्त करता है, परन्तु राष्ट्र राज्य पर निर्भर नहीं होना चाहिये।

उक्त वेद मन्त्र में एक बात समझने की है। इसमें यह नहीं मांगा गया कि राष्ट्र पर राज्य और राजा कौन हो अथवा कैसा हो? अभिप्राय यह है कि राष्ट्र और राज्य असम्बन्धित योजनाये हैं; परन्तु इसमें भी अपवाद है। यह अगले अध्यायों में वर्णन करेंगे।

पाँच

राष्ट्र और देश

हमने पिछले अध्याय में लिखा है कि राज्य और राष्ट्र असम्बन्धित हैं, परन्तु राष्ट्र और देश का परस्पर का घनिष्ठ सम्बन्ध है। जैसे एक व्यक्ति के लिये परिवार है, वैसे ही राष्ट्र है। राष्ट्र वास्तव में बहुत बड़ा परिवार है और व्यक्ति उस परिवार में घटक के रूप में रहता है।

हमारा परिवार से मोह किस लिये होता है और परिवार की मान-प्रतिष्ठा क्यों परिवार के सदस्य की मान-प्रतिष्ठा से सम्बन्धित है? ये प्रश्न मनोवैज्ञानिक हैं। इस पुस्तक का विषय न होते हुए भी इसके उदाहरण तो संसार में भरे पड़े हैं। परिवार में माँ केन्द्र होती है और जब किसी परिवार में माँ अपमानित होती है तो परिवार भर के सदस्य अपमानित हुआ अनुभव करते हैं। परिवार धन-सम्पदा युक्त हो अथवा निर्धन और अकिंचन हो, इसकी मान-प्रतिष्ठा परिवार में माँ के द्वारा ही प्रकट होती है।

यही बात राष्ट्र की है। राष्ट्र के स्त्री वर्ग की जो महिमा राष्ट्र में है, वही परिवार में माँ की मानी जाती है। अतः स्त्री वर्ग राष्ट्र की विभूति है।

इसी प्रकार परिवार और राष्ट्र में अन्य समानतायें भी हैं। परिवार में पिता, भ्राता तथा पुत्र परिवार की प्रतिष्ठा और स्थिरता के प्रतीक हैं। इसी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
प्रकार राष्ट्र के विद्वान और वीर पुरुष राष्ट्र की शोभा और सुदृढ़ता के प्रतीक हैं।

एक परिवार के जीवन के लिये एक घर का होना अत्यावश्यक है। बिना घर के न तो परिवार ही रह सकता है और न इसमें किसी प्रकार की सुख-सुविधा का समावेश हो सकता है। यही बात राष्ट्र और देश की है। राष्ट्र के लिये देश का होना अत्यावश्यक है।

कई बार खानाबदोशों के भी परिवार होते हैं। यही बात यहूदी राष्ट्र की दो सहस्र वर्ष तक रही है, परन्तु खानाबदोश भी रात के समय किसी अस्थायी झोंपड़े अथवा खेमे में बसेरा करते हैं। इसरायलियों ने भी दो सहस्र वर्ष के उपरान्त घर बनाया है। कहने का अभिप्राय यह है कि परिवार और राष्ट्र समकक्ष स्थितियाँ हैं और दोनों के लिये घर की आवश्यकता रहती है।

ज्यों-ज्यों राष्ट्र का स्वरूप बनता जाता है, देश भी निर्माण होना चाहिये। बिना देश के राष्ट्र की सुरक्षा, जीवन की स्थिरता और सरसता सफल नहीं हो सकती।

परिवार ईंट, चूना, सीमेण्ट इत्यादि का घर बनाता है, परन्तु राष्ट्र के लिये देश, प्रायः प्राकृतिक सीमाओं से बनते हैं। पहाड़, नदी, नाले और सागर तट इत्यादि प्राकृतिक सीमायें ही देश की दीवारें होती हैं।

कहने का अभिप्राय यह है कि राष्ट्र के लिये देश की आवश्यकता है। देश की दीवारें प्राकृतिक होनी चाहियें। घर को सुख, सुविधा-सम्पन्न बनाना परिवार का काम है। इसी प्रकार देश को सुन्दर, सुख-सुविधा युक्त बनाना राष्ट्र का कर्त्तव्य है।

जब देश है तो देश में सुव्यवस्था और सुरक्षा का भी प्रबन्ध होना चाहिये। इसी के लिये देश में राज्य की आवश्यकता होती है। देश में और देश के बाहर, राग और लोभ के वश लोग अनुचित ढंग से परद्रव्यापहारी बन जाते हैं। इन लोगों से ही राष्ट्र और राष्ट्र के निवास स्थान देश की रक्षा की आवश्यकता रहती है। इसके लिये राज्य संगठित किया जाता है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

राज्य-प्रपंच के विषय में इतना ही कहा जा सकता है कि उसका स्वरूप कुछ भी हो, यह अपने कर्त्तव्य-पालन में समर्थ होना चाहिये। अंग्रेज़ी के एक कवि ने बहुत सुन्दर ढंग से कहा है–

For forms of government fools contest;
That which governs best is the best.

(मूर्ख लोग राज्य-प्रपंच पर विवाद करते हैं। जो प्रपंच उचित व्यवस्था करे वही श्रेष्ठ है।)

राज्य के कर्त्तव्य क्या हैं और उनका लक्ष्य क्या होना चाहिए? यह जानना राज्य की विद्या जानने से कहीं अधिक आवश्यक है। राज्य प्रजातन्त्रात्मक हो अथवा राजशाही, यह एक गौण प्रश्न है।

मुख्य प्रश्न यह है कि राज्य क्यों?

इसका एक संकेत हमने ऊपर दिया है। देश के भीतर तथा बाहर, रागी, लोभी और तामसी स्वभाव के लोगों से राष्ट्र की रक्षा के लिये राज्य निर्माण किया जाता है। इसको एक शब्द में शासन कहते हैं। राज्य शासन के लिये है।

देश के भीतर की व्यवस्था और बाहरी आक्रमणकारियों से देश की सुरक्षा के अतिरिक्त राज्य का अन्य कुछ काम नहीं। रक्षा के लिये देश की सुदृढ़ सीमायें और सीमाओं की रक्षा के लिये वीर योद्धा तथा घातक शस्त्रास्त्र और आस-पास के पड़ोसियों से मैत्री का व्यवहार विचारणीय विषय हैं। उन सब देशों की गतिविधियों के ज्ञान के लिये चतुर, विश्वस्त और बुद्धिमान गुप्तचर विभाग का निर्माण होना चाहिये। ये कुछ कर्त्तव्य हैं देश की बाहरी विरोधी शक्तियों से देश की रक्षा के लिये।

देश के भीतर की व्यवस्था के लिये प्रजा के घटकों के आचार-विचार का ज्ञान, दुष्ट प्रकृति के जनों पर दृष्टि और भले लोगों की दुष्टों से रक्षा का प्रबन्ध भी राज्य का कार्य है।

प्रश्न उपस्थित होता है कि देश में राजा ही विद्वान निर्माण करने, शास्त्रों की रूप-रेखा बांधने, वीर ओजस्वी सन्तान उत्पन्न करने, गो-पालन, कृषि उद्यानादि का संचालन, वाहन तथा अन्य प्रयोग के यन्त्रादिक निर्माण

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का काम, सन्तान उत्पन्न करने के लिये स्त्रियों की नियुक्ति और उन स्त्रियों से सन्तान उत्पन्न करने का पुरुषों का निर्वाचन इत्यादि कार्य क्यों न करे?

ये सब कार्य किसी न किसी के द्वारा किये ही जाते हैं। इन कामों पर किसी का नियन्त्रण भी होता है। यदि ये निर्माण एवं नियन्त्रण कार्य संगठित रूप से किये जायें तो निस्सन्देह सुगम और श्रेष्ठ होंगे। तो फिर राज्य ही इनको क्यों न करे?

हमारे विचार में व्यवस्था एवं सुरक्षा तथा राष्ट्र को सुन्दर सुदृढ़ और सुख-सुविधा सम्पन्न करना, दो पृथक्-पृथक् कार्य हैं। दोनों प्रकार के कार्य करने वालों की प्रकृति भी भिन्न-भिन्न होती है। अतः दोनों को एक-दूसरे के पृथक् ही रखना चाहिये।

यह विषय कि राज्य और राष्ट्र का परस्पर का क्या सम्बन्ध है, आगे चलकर स्पष्ट करेंगे। इस अध्याय में हमने केवल यह बताया है कि राष्ट्र जिसका स्वरूप वेद मन्त्र (यजु.—22-22) में वर्णन किया गया है, एक देश में स्थित होना चाहिये। देश की प्राकृतिक सीमायें होनी चाहियें। देश में व्यवस्था रखने के लिये एवं देश के बाहर वालों से देश की रक्षा करने के लिये एक सुदृढ़ राज्य होना चाहिए। राष्ट्र, देश और राज्य, ये तीनों एक-दूसरे के पूरक हैं।

छः

राज्य और राष्ट्र

यूँ तो वेद मन्त्रों में और भारतीय धर्म शास्त्रों में राजा के तथा राज्य के स्वरूप का वर्णन मिलता है, परन्तु यह कहीं वर्णन नहीं किया गया कि राजा राष्ट्र-निर्माण का कार्य करे।

राष्ट्र-निर्माण के कार्य इस प्रकार हैं :—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(1) शिक्षा; (2) ज्ञान उपार्जन एवं प्रसार; (3) लौकिक ज्ञान का सांसारिक उपभोगों में लाना अर्थात् उद्योग, चिकित्सा, गृह-निर्माण इत्यादि की विधि विधान करना; (4) अध्यात्म ज्ञान में अन्वेषण और प्रसार कार्य; (5) वीर, स्वस्थ, सुदृढ़ सन्तान; ब्रह्मचर्य द्वारा ओजस्वी वीर्यवान् बालक तैयार करना। ये सब और इसी प्रकार के कार्य शिक्षणालयों में करने के हैं। (6) क्षत्रिय निर्माण करना; (7) स्वास्थ्य और जीवन के लिये सुविधायें उपलब्ध कराना; (8) धनुर्धर अर्थात् निशानेबाज़ लोग तैयार करना; (9) महारथी, अभिप्राय यह कि सेनानायकों का निर्माण—ये सब कार्य भी शिक्षा और शिक्षणालयों से सम्बन्धित हैं। (10) गो-पालन, अश्व-पालन ये वैश्यों के कार्य हैं। आजकल अश्वों के स्थान मोटरगाड़ी इत्यादि वाहन का निर्माण हो गया है। परन्तु सिद्धान्त रूप में इनका निर्माण वैश्य समाज का कार्य है। गौओं का स्थानापन्न अभी नहीं मिला। अतः गों-पालन ज्यों का त्यों ही रहेगा। (11) समाज में उर्वरा स्त्रियां हों। ऐसी उर्वरा जो कुटुम्ब धारण कर सकें। (12) साथ ही वीर्यवान् पुरुष हों। केवल स्त्रियों के योग्य होने से राष्ट्र का कार्य सम्पन्न नहीं हो सकता। उनके साथ वीर्यवान् पुरुष भी आवश्यक हैं। पुरुष केवल सन्तान उत्पन्न करने वाले ही न हों, वरन् धनवान् भी हों। वे यजमान प्रवृत्ति के अर्थात् दान-दक्षिणा देने वाले और विद्वान पुरोहितों का पालन करने वाले हों। ये गृहस्थ आश्रम के कार्य हैं। (13) कृषक भी राष्ट्र का अंग हैं। लहलहाते खेत हों, पके हुए अन्न के भण्डार हों, स्वादिष्ट और पौष्टिक फल हों और पुष्प वाटिकायें हों। जहां वर्षा समय पर हो, वहां कृषक परिश्रमी और बुद्धिशील हों।

संक्षेप में ये सब कार्य जिनका ऊपर वर्णन किया गया है, राज्याधीन नहीं होने चाहियें। आजकल की समाज में इनके लिये पृथक् विभाग तो हैं। उदाहरण के लिये विश्वविद्यालय हैं, उद्योग और कृषि विभाग हैं, शिक्षा विभाग हैं, समाज कल्याण केन्द्र हैं, नगरों में नगर निगम हैं और देहातो में समाज केन्द्र हैं। ये सब हैं और होने भी चाहियें। परन्तु हमारा कहना यह है कि ये सब कार्य राज्य के नियन्त्रण में नहीं होने चाहियें। इनके लिये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धन राज्य दे। यह इस कारण कि राज्य राष्ट्र से धन प्राप्त करता है। अतः यदि राज्य उक्त और उसी प्रकार के अन्य संस्थानों को धन देता है तो किसी प्रकार का अनहोना कार्य नहीं करता। धन देने वाला इन संस्थानों के कार्य नियन्त्रण के लिये न तो विचार किया गया है और न ही वह इसके योग्य है।

राज्य संचालन में क्षत्रिय स्वभाव के लोग होने चाहियें। परन्तु शिक्षा, उद्योग, कृषि, नगर प्रबन्ध इत्यादि में क्षत्रिय स्वभाव के लोग हस्तक्षेप करेंगे तो बात वही होगी जो, कुछ दिन हुए बनारस विश्वविद्यालय की (हड़ताल, दंगा-फसाद) हुई थी।

इसी प्रकार अर्थ-व्यवस्था को राज्य से पृथक् रखने का प्रबन्ध होना चाहिये, नहीं तो वैसी बात होने की सम्भावना बनी रहेगी जैसी स्वर्ण नियन्त्रण से हुई है। सरकार को स्वर्ण नियन्त्रण से क्या आर्थिक लाभ हुआ है, यह तो सरकार ने बताया नहीं, परन्तु राष्ट्र को अपार हानि हुई है। राष्ट्र पंगु होकर सर्वथा राज्य के आश्रय हो गया है। बार-बार एक बात कही जाती है कि स्वर्ण की तस्करी को रोकने के लिये स्वर्ण पर नियन्त्रण रखना आवश्यक था। अर्थात् सरकार प्रबन्ध में अपनी अयोग्यता को छिपाने के लिये पूर्ण राष्ट्र को अकिंचन बनाने में संलग्न हो गई है। तस्करी को रोकने के लिये जहां सीमाओं पर सुप्रबन्ध की आवश्यकता है वहां देश में सोने का मूल्य विदेशों में मूल्य के समान रखना आवश्यक है।

स्वर्ण के सस्ता होने से न तो देश निर्धन होगा और न ही सरकार की आय में किसी प्रकार का अन्तर पड़ने का भय है। इसी प्रकार से राज्य द्वारा आर्थिक व्यवस्था में अन्य हस्तक्षेप अवाञ्छनीय हैं।

देश में बैंक और बैंकों के संगठन स्वतंत्र हों। वे देश के भीतर लेन-देन में स्वतन्त्र हों। प्रतिबन्ध उन बातों पर होना चाहिये, जिनसे कि देश का धन, बिना देश के लिये तुलनात्मक लाभ उपलब्ध किये, विदेश में जाने लगे। अधिक से अधिक सरकार बिना विशेष सुविधा प्राप्त किये, अपनी बैंकिंग कम्पनियां खोल सकती है। इस पर भी इतना ध्यान रखने की बात है कि उन कम्पनियों में प्रजा से करों द्वारा प्राप्त धन नहीं लगाना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

चाहिये। करों द्वारा प्राप्त धन, देश की व्यवस्था बनाये रखने के लिये तथा देश की सुरक्षा के लिये ही प्रयोग में लाया जाना चाहिये। क्षत्रिय वर्ग के हाथ में अर्थ-व्यवस्था वही कुछ करेगी, जो वर्तमान भारत में, सरकारी उद्योग क्षेत्र में हो रहा है।

कुछ छोटी बुद्धि के लोग समझ नहीं सकते कि सरकार की सहायता के बिना राष्ट्र के बड़े-बड़े काम चल कैसे सकते हैं? राष्ट्र के सब कामों को सरकार से स्वतन्त्र रहकर चलाने की बात तो यहां लिखी नहीं जा सकती। हां, हम केवल दो बातों का ही उल्लेख यहां करेंगे। उनसे अन्य कामों में स्वतन्त्रता से चलाने का अनुमान भी लगाया जा सकेगा।

उदाहरण के रूप में शिक्षा का कार्य है। यदि प्रारम्भिक शिक्षा की बात विचार करें तो यह शिक्षा भी निःशुल्क होनी चाहिये। कोई भी व्यक्ति जो एक निश्चित स्तर तक शिक्षित हो, किसी भी स्थान पर जो खुला, हवादार और प्रकाशमय हो, स्कूल खोल सकता है। सरकार उसे विद्यार्थियों की संख्या के अनुसार अनुदान दे। यह आवश्यक हो कि पांच वर्ष और तेरह वर्ष की आयु के भीतर सब बालक-बालिकायें पढ़ें। पांच वर्ष में छात्र क्या पढ़े, यह विश्वविद्यालय अथवा कोई अन्य अन्य शिक्षा समिति निश्चित करे। पांच वर्ष की पढ़ाई के उपरान्त उक्त शिक्षा समिति द्वारा नियुक्त मण्डल बालक की परीक्षा ले और जो लड़के उत्तीर्ण हों, उनको ही छटी श्रेणी में प्रवेश मिल सके। छटी से ग्याहरवीं श्रेणी तक की शिक्षा के संस्थान् जनता द्वारा चलाये जाएं। इन विद्यालयों का स्तर शिक्षा समिति निश्चित करे और प्रत्येक विद्यालय को विद्यार्थियों की संख्या के अनुसार अनुदान मिले। शेष व्यय जनता से दान-दक्षिणा में लिया जाये। विद्यार्थी से शिक्षा का कुछ शुल्क अथवा किसी प्रकार का व्यय न लिया जाये। तदनन्तर विद्यार्थियों की परीक्षा विश्वविद्यालयों द्वारा नियुक्त मण्डल लें और जो छात्र उत्तीर्ण हों, उनको महाविद्यालयों में प्रवेश मिले। महाविद्यालय भी जनता द्वारा खोले और चलाये जाने चाहियें। विश्वविद्यालयों का इन महाविद्यालयों पर नियन्त्रण हो, शिक्षा स्तर के विषय में तथा प्रबन्ध के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

विषय में। महाविद्यालयों की शिक्षा तीन वर्ष की हो। परीक्षा विश्वविद्यालयों द्वारा ली जाये और उत्तीर्ण होने पर स्नातक की उपाधि दी जाये।

स्नातकोत्तर शिक्षा तथा अन्वेषण विभाग सामूहिक रूप में विश्व-विद्यालय चलायें। स्नातकोत्तर शिक्षा में केवल वे स्नातक लिये जायें जो किसी एक विषय का विशेष अध्ययन कर उसमें अन्वेषण करने की रुचि तथा योग्यता रखते हों। विश्वविद्यालयों का पूर्ण व्यय सरकार वहन करे, परन्तु इनका प्रबन्ध स्नातकों तथा उस क्षेत्र के विद्वानों से नियुक्त मण्डल के अधीन हो।

सरकारी शिक्षा विभाग सरकार एवं विश्वविद्यालय मण्डल में सम्पर्क बनाने वाला हो। सरकार अपने दिए अनुदान के अपव्यय को रोकने के लिये इन मण्डलों और शिक्षा विभाग में केवल इतनी रुचि ले कि दिये अनुदान की जांच-पड़ताल कराती रहे।

हमारा विचार है कि इससे शिक्षा एक बहुत बड़ी सीमा तक स्वतन्त्र हो जायेगी और इसका स्तर भी ऊंचा होगा। साथ ही राष्ट्र सुदृढ़ होगा। राजनीति में भाग लेने वाले लोगों को प्लेग के चूहों की भांति इस विभाग से बाहर रखा जाना चाहिये।

यदि शिक्षा का माध्यम देवनागरी लिपि में हिन्दी अथवा कोई क्षेत्रीय भाषा रखा जाये, तो स्नातक की उपाधि प्राप्त करने तक विद्यार्थी सीखने योग्य सब कुछ सीख जायेगा। माध्यम भाषा की परीक्षा शिक्षा पाठशालाओं और विद्यालयों में इतनी हो जानी चाहिए कि उसमें किसी भी जटिल विषय को पढ़कर समझने की योग्यता प्राप्त हो जाये। केवल दो भाषायें विद्यालयों में पढ़नी आवश्यक हों। एक शिक्षा की माध्यम भाषा और दूसरे देश की सम्पर्क भाषा, जो हमारे विचार में हिन्दी ही हो सकती है।

अंग्रेज़ी अथवा विश्व की कोई भी अन्य भाषा महाविद्यालय में विद्यार्थी अपनी रुचि तथा अपने विषयानुसार पढ़ सकता है। महाविद्यालयों में न तो शिक्षा की माध्यम भाषा और न ही सम्पर्क भाषा पढ़ाने की आवश्यकता होनी चाहिए।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तकनीकी शिक्षा सामान्य शिक्षा से पृथक् होनी चाहिए। तकनीकी शिक्षालयों में विद्यालय अथवा महाविद्यालयों से उत्तीर्ण छात्र लिए जायें। तकनीकी शिक्षालय सरकार खोल सकती है, उद्योगपति खोल सकते हैं, उस विशेष तकनीकी शिक्षा में रुचि लेने वाले धनी-मानी लोग खोल सकते हैं। सब अपने-अपने लिए कारीगर तैयार करने के लिए ये विद्यालय खोलेंगे। रेल, तार-डाक विभाग, सचिवालय और लेखा निरीक्षण विभाग अपने-अपने लिए कर्मचारी तैयार करें। प्रत्येक विभाग और उद्योग कर्मचारी रखने के समय परीक्षा लेकर नियुक्ति करे।

सामान्य शिक्षा में भाषा साहित्य, धर्म, दर्शन-शास्त्र, शुद्ध विज्ञान (Pure Science), इतिहास, भूगोल इत्यादि विषय हों।

अभिप्राय यह कि शिक्षा जैसा जटिल विषय भी राज्य से स्वतन्त्र रख कर, अधिक योग्यता से चलाया जा सकता है।

राष्ट्र के एक अन्य विषय पर विचार किया जा सकता है। यह है विदेशीय तथा अन्तर्देशीय व्यापार। इसमें सरकार को हस्तक्षेप नहीं करना चाहिए। सरकार केवल एक बात पर नियन्त्रण रख सकती है। वह यह कि एक-एक पैसा जो विदेश में जाता है, उसका उचित लाभ देश को होता है अथवा नहीं। इसके लिए भी सरकार व्यापार मण्डल बनाये जो स्वयं व्यापार न करता हुआ व्यापार की आय-व्यय पर नियन्त्रण रख सके। वैसे प्रत्येक उद्योगपति को अधिकार होना चाहिये कि वह अपने उद्योग की उपज को विदेशों में बेच सके, परन्तु उसे बेचने पर उचित प्रतिकार देश में आता है अथवा नहीं, यह देखने के लिये व्यापार-मण्डल बनने चाहिएं।

व्यापारियों को छूट होनी चाहिए कि वे अपना माल जहां चाहें, बेचें। परन्तु उसका दाम उस रूप में देश में आना चाहिए जो देश के प्रयोग में आ सके। उदाहरण के रूप में एक रेडियो निर्माता अपने रेडियो किसी विदेश में बेच सकता है, परन्तु उससे प्राप्त मूल्य देश में या तो स्वर्ण के रूप में अथवा ऐसे पदार्थों के रूप में आना चाहिए, जिसकी देश को आवश्यकता हो।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एक व्यक्ति एक लाख रुपये का बढ़िया बासमती चावल विदेश में भेजता है और उसके प्रतिकार में एक लाख रुपये का सामान्य चावल जो भेजे गए चावल से दुगुनी मात्रा में होगा, मंगवाता है। वह उस व्यापार से देश को हानि नहीं पहुंचाता।

एक व्यक्ति बनारसी रेशमी तिल्ले की साड़ियां विदेश में भेजता है और उसके प्रतिकार में स्वर्ण में मूल्य प्राप्त करता है और स्वर्ण देश में आता है। वह देश को हानि नहीं पहुंचाता।

धन का बहाव विदेश को नहीं होना चाहिये।

इस अध्याय में हमने यह बताने का यत्न किया है कि राष्ट्र निर्माण के कार्य राज्य सत्ता से पृथक् होने चाहियें। राज्य द्वारा करने के योग्य वे कार्य हो सकते हैं जो–

यत्तु कामेप्सुना कर्म साहंकारेण वा पुनः।
क्रियते बहुलायासं तद्राजसमुदाहृतम्।।

(भ.-गी.–18-24)

अर्थात्–जो कर्म को बहुत परिश्रम से करें और कर्म के फल को चाह्ने वाले हों, अहंकार युक्त हों। ये लोग राजसी कर्म करने वाले माने जाते हैं।

राष्ट्र का काम सात्त्विक प्रवृत्ति वाले ही कर सकते हैं। सात्त्विक प्रवृत्ति वालों के कार्य इस प्रकार होते हैं–

मुक्तसङ्गोऽनहंवादी धृत्युत्साहसमन्वितः।
सिद्धयोर्निर्विकारः कर्त्ता सात्त्विक उच्यते।।

(भ.-गी.–18-26)

अर्थात्–वह पुरुष सात्त्विक कर्म करने वाला कहा जाता है जो आसक्ति के बिना, अहंकार से रहित, धैर्य और उत्साह से युक्त, सिद्धि-असिद्धि में हर्ष अथवा शोक से रहित होकर कार्य करता है। वह सात्त्विक कर्त्ता कहा जाता है।

ऐसे लोग राष्ट्र निर्माण के कार्य करने में योग्य माने जाने चाहिएं। यदि इन सात्त्विकी प्रवृत्ति वालों के हाथ् में राज्य चला जाये तो वे पूर्ण देश

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

को चौपट कर देंगे और यदि राजसी विचार वालों के हाथ में राष्ट्र-निर्माण का कार्य दे दिया जाये तो वे राष्ट्र के स्वरूप को बिगाड़ कर रख देंगे।

राष्ट्र के लिये राज्य है। राज्य के लिए राष्ट्र नहीं। अतः सात्त्विक प्रवृत्ति वालों द्वारा राज्य-कार्य के लिए लोग तैयार किये जाते हैं परन्तु राज्य से राष्ट्र-कार्य सम्पन्न नहीं किया जा सकता।

सात

राष्ट्र, राज्य और देश

देश राष्ट्र के रहने का स्थान है। राष्ट्र का स्वरूप हमने लिखा है। यह मानव समाज का वह रूप है जो किसी एक देश में रहता हुआ ज्ञान-विज्ञान, बल, पौरुष, धन-सम्पदा, स्वास्थ्य, शौर्य, अन्न, धन से भरे भण्डार वाला, सुन्दर उर्वरा स्त्री वर्ग का स्वामी और शुद्ध पवित्र विचारों वाला हो।

परन्तु प्रश्न यह हो सकता है कि ऐसा ही जन-समूह देश की सीमाओं से बाहर रहने वाला हो तो क्या वह भी देश का राष्ट्र माना जायेगा? नहीं।

कारण यह कि राष्ट्र के स्वरूप के अतिरिक्त राष्ट्र की एक आत्मा भी है। उदाहरण से बात स्पष्ट हो जायेगी। मान लीजिये कि एक स्कूल में किसी कारण से सब छात्रों को कपड़े, एक रंग और ढंग के पहना दिये जायें और वे छात्र जब अपने-अपने घर में जायें तो क्या वे एक ही परिवार के बच्चे माने जायेंगे? नहीं। हमने बताया है कि परिवार का केन्द्र माँ होती है। वह पड़ौसी के बच्चों को, भले ही वे वैसी ही पोशाक पहने हों, अपना बच्चा नहीं मान सकती। कारण स्पष्ट है कि वे उसके शरीर से उत्पन्न नहीं हुए।

इसी उदाहरण को तनिक एक अन्य रूप से विचार करें। एक माँ के दो पुत्र हैं। दोनों लड़ पड़ते हैं और दोनों अपनी-अपनी पत्नियों को लेकर पृथक्-पृथक् घर बना लेते हैं। एक भाई के लड़के दूसरे भाई के लड़कों से

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
सम्बन्ध रखते हुए भी पृथक् घर के सदस्य होते हैं।

यही बात राष्ट्रों में होती है। एक स्थान पर रहना और एक-दूसरे के सुख-दुःख में सहचारिता-अनुभव करना।

समान शिक्षा, समान भाषा, समान रहन-सहन, समान परम्पराऐं और समान विचारों से व्यक्ति एक मन हो गये कहे जाते हैं। इनको उत्पन्न करने के लिये समान साहित्य, समान कला, समान इतिहास और समान परम्परायें सहायक होती हैं। यह एक देश में रहने से ही सम्भव है। साहित्य निर्माता, कलाकार, इतिहास लेखक और वास्तु-कला के जानने वाले, एक राष्ट्र के निर्माण में सहायक होते हैं।

अतः आचार-विचार में समानता एक संस्कृति के लक्षण हैं। ये एक देश में रहते हुए ही सम्भव हैं। जैसे एक घर में रहने वाले प्राणी एक समान विचार और आचरण करते हैं, वैसे ही एक देश के रहने वाले समान आचार-विचार रखने लगते हैं। इससे परस्पर सहानुभूति एवं प्रेम उत्पन्न हो जाता है। सबसे बड़ी बात यह है कि एक घर के प्राणी एक-दूसरे की मान-मार्यादा को अपनी मान-मर्यादा मानने लगते हैं। ये बातें जब एक देश के रहने वालों में आ जाती हैं तब उस देश के रहने वाले राष्ट्र कहलाते हैं।

देश के रहने वाले जब समान आचार-विचार और परस्पर आदर, मान रखते हैं, तब वे राष्ट्र बन जाते हैं। पूर्ण राष्ट्र एक मन और एक आत्मा माना जाता है। राष्ट्र की यह आत्मा है। जैसे एक प्राणी में दो आत्मा नहीं रह सकतीं अथवा एक प्राणी के दो मन नहीं हो सकते, इसी प्रकार एक राष्ट्र में दो संस्कृतियों के लोग अथवा दो मन वाले लोग नहीं रह सकते। राष्ट्र में एक मन और आत्मा होनी चाहिये।

सत्य ज्ञान-विज्ञान, स्वस्थ-सबल घटक, दुग्ध-घी, अन्न-अनाज की प्रचुरता, वीर, शौर्यवान, तेजवान धनुर्धर, शस्त्रास्त्र संचालन करने वाले युवक, कुटुम्ब धारण करने वाली स्त्रियां, ये राष्ट्र का स्वरूप अर्थात् शरीर हैं।

मन, आत्मा और शरीर, सब मिलकर ही प्राणी कहलाता है। अतः आचार-विचार (संस्कृति) का परस्पर व्यवहार (धर्म) राष्ट्र की आत्मा है

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और ज्ञान, विज्ञान, पुत्र-धन, स्त्री-धन, गो-धन और पशु-धन ये राष्ट्र का शरीर हैं। तीनों को इकट्ठा रखना ही राष्ट्र का स्वरूप बनाता है।

यह समग्र रूप एक देश में इकट्ठे रहने से ही बन सकता है। जब देश है तो देश का सुप्रबन्ध और देश की रक्षा अनिवार्य हो जाती है। इसके लिये राज्य की आवश्यकता रहती है।

प्रबन्ध और रक्षा किन से और किस प्रकार करनी पड़ती है? यह प्रश्न है। इसके सत्य ज्ञान पर ही राज्य और राष्ट्र का परस्पर समन्वय और एक-दूसरे में सीमायें बांधी जा सकती हैं।

यह इतिहास है कि आदि काल में प्रायः मनुष्य सदाचारी और स्वतः धर्म का पालन करने वाले होते थे, परन्तु जीवन चलाते-चलाते बहुत से लोग प्रमाद, आलस्य, राग, द्वेष, मोह में फंस गये। वे कर्त्तव्या-कर्त्तव्य को भूल गये। वे भक्ष्याभक्ष्य, गम्यागम्य, वाच्यावाच्य को विस्मरण कर परस्पर छीना-झपटी करने लगे। तब राज्य की आवश्यकता पड़ी और राज्य का एक मुख्य व्यक्ति (राजा) नियुक्त किया गया।

इतना ही स्पष्ट है कि राज्य एवं राजा देशान्तर्गत और देश के बाहर के परद्रव्यापहारी जीवों से धर्म परायण लोगों की रक्षा के लिये निर्माण किया गया था। बस प्रबन्ध और सुरक्षा से यही अभिप्राय है।

इस कार्य में परिश्रमी, मान-अभिमान से युक्त, लाभ-हानि का विचार करने वाले तथा एक सीमा तक क्रूर स्वभाव के लोग चाहियें। यदि प्रबन्ध और सुरक्षा में ऐसे लोग न रखकर वे लगायें जायें जो कोमल स्वभाव के, निःस्वार्थ भाव वाले, आसक्ति रहित, फलाफल की चिन्ता से रहित हों तो निस्संदेह दुष्टों से वे न तो देश की रक्षा कर सकेंगे और न ही देश में व्यवस्था रख सकेंगे। दुष्टों तथा राग, मोह में ग्रसित व्यक्तियों के लिये कठोर व्यवहार की आवश्यकता रहती है।

यह कहा जाता है कि देश के भीतर और बाहर भी शुद्ध न्याय और नम्रता का व्यवहार रखा जाये तो बुरा कर्म करने वाले अपनी बुराई को समझ जायेंगे और उसका त्याग कर देंगे। इस व्यवहार को महात्मा बुद्ध

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

और इस युग में महात्मा गांधी ने चलाने का यत्न किया था। न तो महात्मा बुद्ध इस कार्य में सफल हुए और न ही महात्मा गांधी। दुष्ट को सन्मार्ग दिखाने के स्थान वे अपने साथियों को उलटा मार्ग दिखाने में ही सफल हुए थे। इतिहास इसका साक्षी है कि प्रकृति से दुष्ट व्यक्ति प्रेरणा द्वारा अथवा श्रेष्ठ व्यक्तियों के स्वेच्छा से कष्ट सहन करने से सुधर नहीं सकते।

यह दुष्टों को दण्ड देने की भावना नहीं है। दण्ड देने वाला परमात्मा है। हां, राज्य सतर्क, सचेत, सबल रहकर भले लोगों की रक्षा करे और इसके लिये आवश्यक हो तो बल प्रयोग भी करे। इस कार्य में क्रूरता एवं मार-काट आवश्यक हो तो वह भी क्षम्य है।

मान लीजिये कि एक बालक मार्ग चलते लोगों को छड़ी से चोट लगाता रहता है। उसे समझाया जा सकता है, परन्तु यदि वह न समझे तो उसकी छड़ी छीन लेना ही उपाय है। यही बात दुष्ट व्यक्ति की है। जो समझाने से न समझें और जो अपने शरीर, मन और बुद्धि से दूसरों को हानि पहुंचाते जायें, उनसे उनका शरीर छीन लेना भी एक उपाय है। यह अन्तिम उपाय होता हुआ भी वर्जित नहीं हो सकता।

इसी अन्तिम उपाय के लिये राज्य-निर्माण किया जाता है और इसके संचालन में वे लोग ही प्रयुक्त होने चाहियें जो क्षात्र स्वभाव और बुद्धि के हों।

हमने पूर्व अध्याय में यह बताया है कि राज्य और राष्ट्र भिन्न-भिन्न संस्थान् हैं। इनके संचालक भिन्न-भिन्न हैं। इनका स्वरूप भी भिन्न-भिन्न है। यह ठीक है कि राज्य राष्ट्र में से ही निर्माण होता है, परन्तु राष्ट्र-कार्य करने वालों से वह पृथक् होता है। क्षत्रिय राज्य का अंग हैं। राज्य द्वारा निर्माण होते हैं, परन्तु वे राष्ट्र निर्माण कार्य के योग्य नहीं हो सकते।

राष्ट्र-कार्य देश के अन्तर्गत कार्य है। राज्य का कार्य भीतर और बाहर दोनों स्थानों पर चलता है। राष्ट्र-कार्य देश के भले लोगों से सम्बन्ध रखता है, परन्तु राज्य-कार्य देश-विदेश के दुष्ट लोगों से निपटने के लिये

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है। राष्ट्र-कार्य भले लोगों में श्रेष्ठता बनाये रखने तथा उनको अधिक श्रेष्ठ बनाने के लिये है, परन्तु राज्य-कार्य उन दुष्ट लोगों से निपटना है जो राष्ट्र निर्माताओं तथा राष्ट्र-कार्यकर्त्ताओं के वश से बाहर हैं, जो उनमें रहना स्वीकार न करें।

संक्षेप में राज्य का कार्य पुलिस तथा सेना सम्बन्धी है और राष्ट्र का कार्य ब्राह्मण तथा वैश्य वर्ग से सम्बन्धित है।

यह हम बता चुके हैं कि राष्ट्र का स्वरूप क्या है? राष्ट्र के मन और आत्मा के विषय में भी हमने लिखा है। संक्षेप में राष्ट्र एक प्राणी के शरीर के तुल्य है और राज्य इस प्राणी के हाथ हैं जो इस शरीर के अनिच्छित अंशों को तथा बाहर से हानि पहुंचाने वालों के शरीर से दूर करते हैं। हाथ शरीर का भाग होते हुए भी पेट, सिर और पांवों का काम नहीं कर सकते। इसी प्रकार राज्य-कार्य में संलग्न लोग ब्राह्मण एवं वैश्य समुदाय का कार्य करने के अयोग्य होते हैं।

यदि शिक्षा, व्यापार, कृषि इत्यादि कार्यों को बड़े-बड़े संगठनों में बांध कर राज्य के अधीन कर दिया जाये तो क्या हानि है? यही आजकल किया जा रहा है और इसके दोष भी प्रकट हो रहे हैं।

उदाहरण के रूप में सरकारी उद्योग तन्त्र (Public Sector) के कार्यों को लिया जा सकता है। यह तन्त्र जिस ढंग से चल रहा है, उसमें त्रुटि केवल यही है कि राज्य कार्य करने वाले उद्योगपति हैं। यद्यपि प्रत्येक उद्योग के व्यवस्थापक बहुत ऊंचे वेतन लेने वाले हैं, इस पर भी उनके काम सर्वथा लाभहीन और अव्यवस्था युक्त हैं। निर्मित वस्तुयें घटिया, महंगी और अल्प उपयोग वाली होती हैं।

यही बात व्यापार में है। भारत सरकार ने एक I.T.C खोल रखी है। यह भारत में प्राकृतिक पदार्थों और देश में निर्मित वस्तुओं को विदेशों में बेचती है। इसमें भी हानि अधिक होती है और प्रायः I.T.C के अधिकारी कल्पनाहीन, अनुभवहीन और राजनीतिक दबावों में फंसे हुए भूल पर भूल करते रहते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जहां विदेशी सरकारों से व्यवहार करना हो वहां भले ही अपने देश की सरकार हस्तक्षेप करे, परन्तु एक देश के व्यापारियों और दूसरे देश के व्यापारियों को स्वतन्त्रता से कार्य करने देना चाहिये। इसमें सरकार बाधक उस अवस्था में ही हो सकती है जब कि व्यापारी दी गई वस्तु अथवा दाम के प्रतिकार में उचित मूल्य अथवा वस्तु प्राप्त न करता हो।

आठ

संस्कृति

यह पुस्तक राज्य कार्य एवं प्रणाली पर नहीं लिखी जा रही और न ही इसका उद्देश्य अर्थशास्त्र की व्याख्या करनी है। पीछे हमने एक संकेत मात्र ही इन दो के विषय में लिखा है। यह इस कारण कि हम राष्ट्र के और राज्य के कार्यों में भेद और उस भेद में कारण बताना चाहते थे। वास्तव में हमारा विषय राष्ट्र है।

हमने पिछले अध्याय में यह वर्णन किया है कि राष्ट्र की एक आत्मा और मन होता है, जिससे एक राष्ट्र और दूसरे राष्ट्र में भेद किया जा सकता है।

पुनः हम एक प्राणी का उदाहरण ले सकते हैं। प्राणी शरीर, मन और आत्मा के संयोग का नाम है। इसी प्रकार राष्ट्र में भी शरीर, मन और आत्मा का संयोग होता है। शरीर तो वेद मन्त्र (यजु.—22-22) में वर्णन किया है। उसमें वेदज्ञ ब्राह्मण का उल्लेख भी है। यह मस्तिष्क का प्रतीक है। मस्तिष्क में संस्कार बैठते हैं, इसी प्रकार राष्ट्र के ब्राह्मण वर्ग संस्कार युक्त मन के प्रतीक हैं। मस्तिष्क तो एक अंग है। इसी प्रकार ब्राह्मण राष्ट्र का अंग होते हैं, परन्तु ब्राह्मण जिस संस्कृति का व्याख्यान करते हैं, वह मन रूप होकर ही करते हैं।

संस्कृति राष्ट्र के मन में बैठे संस्कारों का प्रस्फुरण है। प्राणी के शरीर में आत्मा ज्ञान का बोधक होता है। इसे उपनिषदों की भाषा में विज्ञानात्मा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

भी कहते हैं। यह प्राणी का चेतन अंग है।

भारतीय परम्परा के अनुसार सत्य ज्ञान का स्रोत वेद हैं। इसी कारण राष्ट्र का मस्तिष्क अर्थात् ब्राह्मण वर्ग वेद का ज्ञाता माना है। अभिप्राय यह है कि आत्मा और मन, ज्ञान और संस्कारों का समुच्चय है। ज्ञान की बात अगले अध्याय में करेंगे। यहां संस्कारों और उनसे निर्मित संस्कृति का ही उल्लेख करेंगे।

संस्कृति का ज्ञान बिना संस्कारों के विषय में जाने नहीं हो सकता। संस्कार (Impressions) वातावरण और कर्मों के प्रभाव को कहते हैं। संस्कार दो प्रकार के होते हैं।

(1) मनुष्य जाति से प्राप्त; (2) देश के तथा पड़ोस में रहने वालों के प्रभाव से उत्पन्न। ये दूसरी प्रकार के संस्कार माता-पिता, परिवार, मोहल्ले व नगर इत्यादि के लोगों, शिक्षा तथा साहित्य का परिणाम होते हैं।

प्राणी का जन्म तो पूर्व जन्म के कर्मों से होता है। प्राणी का मनुष्य के घर अथवा पशु, कीट, पतंग के घर जन्म लेना, किसी विद्वान् अथवा मूर्ख, धनी अथवा निर्धन, मज़दूर अथवा मालिक, अनपढ़ अथवा पठित परिवार में उत्पन्न होना, पूर्व जन्म के कर्मों से होता है। इसी प्रकार पुरुष का अपांग अथवा पूर्णांग होना, बुद्धिशील अथवा निबुर्द्धि होना, दुर्बल होना अथवा सबल होना, ये सब पूर्व जन्म के कर्मफल के अधीन है।

परन्तु पूर्व जन्म से जो कुछ मिला है, उसमें संशोधन, परिवर्तन, उन्नति अथवा अवनति इस जन्म के कर्मों के प्रयास से हो सकती है। इस जन्म में बच्चे का भोजन, वस्त्र, शिक्षा-दीक्षा, रहन-सहन, मित्र, शत्रु, संगी-साथी सब और अन्य सम्पर्क में आने वाले पदार्थ अथवा लोग संस्कार उत्पन्न करते हैं। इस दूसरी प्रकार के संस्कारों के द्वारा ही राष्ट्र निर्माण होता है।

प्रत्येक देश का राष्ट्र अपने-अपने ढंग पर अपने घटकों के संस्कार निर्माण करता है। उदाहरण के रूप में अंग्रेज़ स्वतन्त्रता प्रिय जाति होने से व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के संस्कार अपने बच्चों पर डालते हैं। जर्मनी जातीय-गौरव, अभिमान अपने बच्चों को प्रदान करता है। अमरीका भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

स्वतन्त्रता, परन्तु उच्छृङ्खलता का संस्कार बनाता रहता है। इसी प्रकार प्रत्येक जाति की कुछ न कुछ विशेषता है। हिन्दू समाज की विशेषता इसकी अध्यात्म सम्बन्धी धारणा है। वह ही इसके संस्कारों की रूप-रेखा बांधती है।

उदाहरण के रूप में सब हिन्दुओं के मन पर यह धारणा अंकित है कि एक परमात्मा है, एक जीव आत्मा है। ये चेतन तत्त्व अजन्मा और अक्षर हैं। जीवात्मा जन्म-जन्मान्तर तक चलता रहता है और एक जन्म के कर्मफल लेकर दूसरे जन्म में जाता है।

ज्ञान और सुकृत मनुष्य की आत्मा को जन्म-मरण के चक्कर से मुक्त कर सकते हैं।

इसी प्रकार एक अन्य संस्कार है। हिन्दुओं में विद्वानों का मान सर्वोपरि है। एक अन्य संस्कार भी है–'आत्मवत् सर्व भूतेषू...।'

यहां एक बात समझने की है। वह है संस्कृति और सभ्यता का सम्बन्ध। सभ्यता मन और शरीर की उपज है। इसके विपरीत संस्कृति मन और आत्मा की उपज है। मन संस्कारों का स्थान है, शरीर कर्म का और आत्मा ज्ञान का स्थान है। जब संस्कार ज्ञान से सम्बन्धित होते हैं तब संस्कृति की सृष्टि होती है। जब संस्कार केवल कर्म से सम्बन्ध रखते हैं, तब सभ्यता की सृष्टि होती है। कभी कर्म-संस्कार और ज्ञान तीनों सम्बन्धित हो जाते हैं, तब संस्कृति और सभ्यता सम्बन्धित हो जाते हैं।

अभिप्राय यह है कि सुसंस्कृत मनुष्य सभ्य भी हो सकता है, नहीं भी हो सकता। सभ्य व्यक्ति सुसंस्कृत भी हो सकता है और नहीं भी हो सकता।

सभ्यता मन और शरीर से, अभिप्राय यह कि संस्कारों और कर्म से सम्बन्धित होती है। जब मनुष्य किसी प्रकार का कार्य स्वभाव से अर्थात् संस्काराधीन करता है, तो वह सभ्यता को प्रकट करता है। वह सभ्यता संस्कारों के अधीन होती है। यह आवश्यक नहीं कि संस्कार ज्ञानयुक्त हों।

एक उदाहरण से बात स्पष्ट हो जायेगी। एक व्यक्ति किसी अतिथि का आदर भाव में स्वागत करता है। उसे चाय-पानी पूछता है। उसे बैठाता

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

है, मीठी वाणी और प्रिय शब्दों में उसके आने का प्रयोजन जानने का यत्न करता है। यह सभ्य व्यवहार है।

इसी प्रकार एक व्यक्ति स्वभाववश स्नान करता है, स्वच्छ और शुद्ध स्थान पर रहता है, वस्त्र पहनता है और वैसा ही भोजन करता है। वह सभ्य कहलाता है। कहने का अभिप्राय यह है कि स्वभाविक कर्म, सभ्यता के लक्षण हैं। वे अच्छे और बुरे दोनों हो सकते हैं।

परन्तु जब संस्कार एतदर्थ स्वभाव ज्ञानजन्य हों, अर्थात् मनुष्य अपने स्वभाव का कारण जानता है तो वह सुसंस्कृत और सभ्य माना जा सकता है।

उदाहरण के रूप में जब मनुष्य यह जानता है कि कोई कर्म करने से उसे फल भोगना पड़ेगा और उस ज्ञान के अधीन वह कर्म करता है और ऐसा करना उसका स्वभाव बन जाता है, तब मनुष्य सुसंस्कृत और सभ्य दोनों है।

कोई मनुष्य ऐसा भी हो सकता है जो स्वभाव से मीठा बोलता हो, परन्तु वह स्वार्थ सिद्धि के लिए मिथ्या भाषण कर देता हो। वह अपने मिथ्या भाषण के फल मिलने का ज्ञान नहीं रखता। वह ऐसा समझता है कि उसे कोई देखने वाला नहीं, तब उसका मीठा बोलना केवल सभ्यता का लक्षण होगा, संस्कृति का नहीं।

जब भी संस्कार ज्ञानयुक्त होंगे और कर्म संस्कारों से प्रेरित होंगे, तब संस्कृति और सभ्यता साथ-साथ होंगे।

परन्तु ऐसा भी हो सकता है कि मनुष्य चोरी नहीं करता, अनृत भाषण नहीं करता, किसी को अकारण कष्ट नहीं पहुँचाता और यह सब इस कारण करता है कि वह परमात्मा को सर्वव्यापक, सर्वद्रष्टा और सर्वज्ञ मानता है और वह कर्मफल से भय खाता है। परन्तु वह एक झोंपड़े में रहता है, नित्य स्नान नहीं करता, स्वच्छ वस्त्र नहीं पहनता, घर पर आये किसी का ढंग से स्वागत नहीं करता, कोई आ जाये तो उससे रूखेपन से बोलता है। ऐसा व्यक्ति सुसंस्कृत होता हुआ भी सभ्य नहीं माना जा सकता।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतः राष्ट्र के गुणों में जब संस्कृति का उल्लेख आता है तो संस्कृति और सभ्यता दोनों से अभिप्राय होता है। कर्म के विषय में अगले अध्याय में लिखेंगे। यहां यह बताने से अभिप्रेत है कि राष्ट्र का मन संस्कृति से प्रकट होता है और राष्ट्र की आत्मा ज्ञान से। अतः राष्ट्र के घटकों को सुसंस्कृत और ज्ञान युक्त होना चाहिये। तब ही राष्ट्र आत्मवान और मनस्वी कहलायेगा।

नौ

धर्म

मनुष्य-शरीर-कर्म करता है। यह कर्म हीन नहीं रह सकता। एक परिस्थिति में वह तीन प्रकार से व्यवहार रख सकता है। वह कर्म कर सकता है, वह विकर्म कर सकता है अथवा वह निष्कर्म भी रह सकता है।

निष्कर्म रहना तो स्वभाव नहीं। यह हमने ऊपर लिखा है। इसके विषय में भगवद्गीता में भी कहा है—

न हि कश्चित्क्षणमपि जातु तिष्ठत्यकर्मकृत्।
कार्यते ह्यवशः कर्म सर्वः प्रकृतिजैर्गुणैः।। (3-5)

अभिप्राय यह है कि मनुष्य एक क्षण के लिए भी बिना कर्म किये नहीं रह सकता। सब मनुष्य गुणों से स्वभाववश विवश हो कर्म करते हैं।

इस पर भी कुछ ऐसा मान लेते हैं कि वे कर्म नहीं करेंगे। उदाहरण के रूप में एक चोर किसी घर में सेंध लगा रहा है। कोई राही देखता है, समझता है परन्तु चुपचाप चलता जाता है। वह मन में समझता है कि वह कर्म नहीं कर रहा है।

इसी प्रकार का भ्रम कभी राज्यों को भी हो जाता है। एक राज्य किसी दूसरे राज्य में घुसकर वहां लूटमार आरम्भ कर देता है। एक तीसरा राज्य देखता है, जानता है, परन्तु तटस्थ बना हुआ मौन रहता है। वह

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

समझता है कि वह कर्म नहीं कर रहा।

उक्त दोनों उदाहरणों में, चोर को देखने वाला अथवा एक राज्य को दूसरे राज्य पर आक्रमण करते हुए देखता हुआ, कोई व्यक्ति अथवा कोई राज्य मौन रह यह समझता है कि वह निष्कर्म है। वह निष्कर्म नहीं है।

कृष्ण कहते हैं–

कर्मण्यकर्म यः पश्येदकर्मणि च कर्म यः।
स बुद्धिमान्मनुष्येषु स युक्तः कृत्स्नकर्मकृत्।। (भ.ग.- 4-18)

जो मनुष्य कर्म में अकर्म और अकर्म में कर्म देखता है, वह ही मनुष्य बुद्धिमान और योगी है।

अभिप्राय यह है कि अकर्म भी कर्म ही है। जो बुद्धिमान मनुष्य कर्म को निष्काम भाव से करता हुआ अकर्म की भांति समझता है और अकर्म को भी कर्म मानता है, वह योगी और विद्वान् है।

अकर्म में कर्म का अभिप्राय यह है कि वह मौन और निष्क्रिय रहता हुआ भी कर्म करता है। उक्त उदाहरण में चोर को सेंध लगाते देख मौन रहने वाला मनुष्य वास्तव में चोर की सहायता कर रहा होता है और चोर के पाप कर्म का भागीदार होता है। इसी प्रकार एक राज्य के दूसरे राज्य पर आक्रमण करने वाले को देख मौन रहने वाला राज्य एवं राष्ट्र वास्तव में आक्रान्ता का सहायक हो रहा होता है और उसके पाप का भागी होता है।

अतः निष्कर्मता होती नहीं। अब दो व्यवहार ही शेष रह जाते हैं कर्म और विकर्म। दूसरे शब्दों में धर्म और अधर्म।

अतः राष्ट्र को धर्मवान् बनाना राष्ट्रीय कार्य है। इस पर प्रश्न उपस्थित होता है कि धर्म क्या है?

धर्म तीन प्रकार के हैं। सनातन धर्म, सामान्य धर्म और विशेष धर्म। सनातन धर्म तो वे हैं जो सदैव, सब अवस्थाओं में और सब परिस्थितियों में पालन करने योग्य हैं। मनु के अनुसार ये दस हैं–

घृतिः क्षमा दमोऽस्तेयं शौचमिन्द्रियनिग्रहः।
धीर्विद्या सत्यमक्रोधो दशकं धर्मलक्षणम्।।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

धैर्य रखना, क्षमा करना, मन का दमन, अस्तेय, शौच, इन्द्रिय-निग्रह, बुद्धियुक्त व्यवहार, ज्ञानयुक्त व्यवहार, सत्य व्यवहार और क्रोध न करना— ये दस धर्म के ऐसे लक्षण हैं जिनका पालन सब वर्णों को सदैव चारों आश्रमों में करना चाहिये।

सामान्य धर्म उनको कहते हैं जो सामान्य स्थितियों में सबके पालन योग्य होते हैं। उदाहरण के लिए युवा पुरुष और युवती विवाह करें। आठ प्रकार के विवाहों में प्रथम चार प्रकार के विवाह श्रेष्ठ हैं।

अतः सामान्य परिस्थिति में सब युवक-युवतियों के लिए यह सामान्य धर्म है। और भी, सब गृहस्थ पंच महायज्ञ करें। अकिंचनता की अवस्था में केवल अग्निहोत्र करने से भी पंच महायज्ञ मान लिए जाते हैं। यदि इतनी भी सामर्थ्य न हो तो गायत्री मन्त्र का जप मात्र भी पंच महायज्ञ के समान फलदायक माना जायेगा। घर में अतिथि आये तो उसका सत्कार करे। यदि किसी कारण से उसकी सेवा-सुश्रूषा के लिए घर पर कुछ न हो तो जल पिलाकर ही उसका सत्कार करे।

ये सब सामान्य धर्म हैं।

तीसरी प्रकार के धर्म हैं, विशेष धर्म। विशेष परिस्थितियों में करने अथवा न करने योग्य। इसमें कर्त्ता की इच्छा और रुचि का भी विचार है। उदाहरण के रूप में एक विशेष धर्म है, युवक पढ़ाई करते हुए ब्रह्मचर्य का पालन करे, विवाह न करे। विवाह पच्चीसवें वर्ष में किया जा सकता है। अतः पच्चीस वर्ष के उपरान्त पढ़ने वाला विद्यार्थी विवाह न कर ब्रह्मचारी रहे अथवा विवाह कर ले और पढ़ाई जारी रखे, यह विद्यार्थी की इच्छानुसार है। अतः यह विशेष धर्म है।

इसी प्रकार अनेक धर्म हैं जो कर्त्ता की इच्छा पर निर्भर करते हैं। इस पर भी धर्म पालन का फल तो होगा।

धर्म की इस संक्षिप्त व्याख्या के अन्त में हम एक सर्वमान्य धर्म को लिख देना चाहते हैं। वह सामान्य रूप में सब मनुष्यों को सब अवस्थाओं में पालन करने योग्य है। स्मृतिकार इस प्रकार लिखता है—

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्रूयतां धर्म सर्वस्वं श्रुत्वाव चैव धार्यताम्।
आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्।।

इसका अर्थ है कि जैसा व्यवहार कोई दूसरों द्वारा अपने साथ किया जाना पसन्द करता है, वैसा ही वह दूसरों के साथ करे। यह सब धर्मों का सार है, जो सबको पालन करना चाहिये। संक्षेप में यह है धर्म जिसे करने से व्यक्ति राष्ट्र-कार्य करता हुआ समझा जाता है।

एक जीवित राष्ट्र कर्म करता है। उसके कर्म आत्मा और मन से अर्थात् ज्ञान और संस्कृति से प्रेरित होते हैं।

Central Library
167954
Gurukula Kangri (Deemed to be University) Haridwar

दस

धर्म और पंथ

कहते हैं कि सर्वप्रथम स्मृतिशास्त्र ब्रह्मा द्वारा लिखा गया था। उसके स्मृतिशास्त्र का नाम त्रिवर्ग कहा जाता है। यह शास्त्र ब्रह्मा ने देवताओं अर्थात् दैवी सम्पदा वालों को सुनाया था। इस शास्त्र की प्रस्तावना में ब्रह्मा ने देवताओं को इस प्रकार कहा था—

तानुवाच सुरान् सर्वान् स्वयम्भूर्भगवांस्ततः।
श्रेयोऽहं चिन्तयिष्यामिव्येतु वो भीः सुरर्षभाः।।
ततोऽध्यायसहस्राणां शतं चक्रे स्वबुद्धिजम्।
यत्र धर्मस्तथैवार्थः कामश्चैवाभिवर्णितः।।
त्रिवर्ग इति विख्यातो गण एष स्वयम्भुवा।
चतुर्थो मोक्ष इत्येव पृथगर्थः पृथग्गुण।।

(महा भा.-शा.—59-28, 29, 30)

इसका अर्थ है—उन दैवी सम्पदा (श्रेष्ठ जनों) के भय को दूर करने के लिए ब्रह्मा जी ने उनके कल्याण का मार्ग विचार किया। इस पर इन्होंने अपनी बुद्धि से विचार कर एक लाख श्लोकों का एक त्रिवर्ग शास्त्र रचा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

इसमें उन्होंने धर्म, अर्थ और काम की उपलब्धि का वर्णन किया। उन्होंने कहा कि मोक्ष की उपलब्धि उससे पृथक् गुण है और पृथक् ही अभिप्राय है।

अभिप्राय यह कि स्मृतिशास्त्र तो धर्म, अर्थ और काम को नियमबद्ध करने के लिये है, परन्तु मोक्ष प्राप्ति की विद्या उसमें नहीं है। मोक्ष धर्म से पृथक् है। उसके गुण भी पृथक् हैं।

हमारा यह कहना है कि धर्म, अर्थ और काम तो धर्म-शास्त्र का विषय हैं और मोक्ष पंथ का विषय है, जिसे अरबी भाषा में मज़हब, अंग्रेजी में 'रिलिजन' और हिन्दी में मत कहते हैं।

धर्म समाज द्वारा नियन्त्रित होता है, परन्तु मज़हब प्रत्येक व्यक्ति का अपना-अपना है। उदाहरण लें तो बात स्पष्ट हो जायेगी। एक दंपती हैं। उनका परस्पर का सम्बन्ध धर्म का विषय है। यहां तक कि यदि पुरुष अथवा स्त्री परस्पर यौन सम्बन्ध रखने से इन्कार कर दें तो विवाह भंग समझा जाता है। यद्यपि यौन सम्बन्ध एक अति गुप्त एवं गुह्य कृत के साथ सम्बन्ध रखता है, परन्तु यह धर्म अन्तर्गत आता है। यह काम उपलब्धि का साधन है। सब देशों के कानून पति-पत्नी के सम्बन्ध में इसे मानते हैं।

परन्तु पत्नी अपनी मोक्ष साधना में दुर्गा की उपासिका हो सकती है और पति मोक्ष की सिद्धि को ही निरर्थक मान सकता है अथवा किसी अन्य प्रकार से इसकी प्राप्ति सम्भव समझ सकता है। इस मतभेद पर विवाह नहीं टूट सकता। यह व्यवहार धर्म शास्त्र द्वारा नियन्त्रित नहीं है। यह विषय पृथक् है।

अतः यह विधान है कि वे सब कार्य जो धर्म, अर्थ और काम की उपलब्धि में किए जाते हैं, धर्म-स्मृति के नियन्त्रण का विषय हैं। इनके विषय में नियन्त्रण रखना समाज का काम है। ये धर्म के (कानून के) अन्तर्गत आते है।

पुनः एक उदाहरण से बात स्पष्ट की जा सकती है। एक मुसलमान स्त्री किसी हिन्दू से विवाह करती है। विवाह करने में समाज के कानून का

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हस्तक्षेप इस सीमा तक ही हो सकता है कि दोनों व्यस्क हैं अथवा नहीं हैं? दोनों स्वेच्छा से विवाह कर रहे हैं अथवा बल अधीन अथवा किसी अन्य विवशता के कारण? दोनों विवाह के प्रयोजन को सिद्ध कर रहे हैं अथवा नहीं? परन्तु समाज का कानून इस बात में हस्तक्षेप नहीं कर सकता कि पति क्यों पलथी मार कर भगवान की उपासना करता है और पत्नी क्यों उठ-बैठ कर नमाज़ अदा करती है? ये बातें मज़हब के साथ सम्बन्ध रखती हैं।

इसके साथ ही यह भी दोनों के अपने-अपने विचार करने की बात है कि स्त्री बुर्का पहनती है अथवा नहीं? बुर्का पहनना विशेष धर्म के अन्तर्गत आता है। यह न तो सनातन धर्म है और न ही सामान्य धर्म।

सामान्य धर्म है कि सर्दी-गर्मी से, आंधी-धक्कर से रक्षा के लिए वस्त्र पहने जायें। इसमें सामान्य स्थितियों में समान धर्म हो सकते हैं। अर्थात् शीत प्रधान देशों में शरीर को बहुत सीमा तक ढांप कर रखने की आवश्यकता रहती है। वहां गर्म कपड़े पहनने धर्म हैं; परन्तु गर्म जलवायु के देशों में न तो ऊनी गर्म कपड़े पहनने धर्म हैं और न ही कुछ अधिक शरीर को ढांपने की आवश्यकता है। बुर्का पहनना न तो सनातन धर्म है और न ही सामान्य। यह विशेष धर्म है और पहनने वाली की रुचि पर निर्भर करता है।

कहने का अभिप्राय यह है कि समाज पंथ के नाम पर किसी पर नियन्त्रण नहीं कर सकता। न ही विशेष धर्मों के लिये किसी को विवश कर सकता है। एक मुसलमान किसी दूसरे मत वाले से अपनी लड़की से विवाह पर आपत्ति इस बात पर नहीं कर सकता कि वह पूजा-पद्धति वैसी नहीं अपनाता, जैसी लड़की अपनाती है अथवा लड़की के माता-पिता ने स्वीकार की हुई है। आपत्ति इस बात पर हो सकती है कि लड़की-लड़का व्यस्क हैं अथवा नहीं? वे स्वेच्छा से विवाह कर रहे हैं अथवा किसी विवशता के कारण? वे विवाह का प्रयोजन सिद्ध करते हैं अथवा नहीं? वे समाज के अन्य उचित नियम पालन करते हैं अथवा नही?

हमने धर्म और पंथ अर्थात् मज़हब में अन्तर बताने का यत्न किया है। धर्म समाज के नियन्त्रण में है। पंथ व्यक्तिगत बात है। समाज की बात

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

तो दूर रही, यह किसी माता-पिता, भाई-बन्धु अथवा पति-पत्नी के भी नियन्त्रण का विषय नहीं है।

वर्तमान युग में एक कठिनाई उत्पन्न हो रही है। प्रायः पंथ अपने में कुछ धर्म सम्बन्धी व्यवहार भी नियत किये हुए हैं। इससे पंथ प्रवर्त्तकों ने अपने पंथ को आकर्षक एवं उपकारी सिद्ध करने का यत्न किया है। उदाहरण के रूप में प्रायः सब पंथ वाले, मार्क्सवादियों के अतिरिक्त, सत्य बोलने का समावेश अपने मज़हब में करते हैं। इसी प्रकार दया का भाव रखना, क्षमा करना, विवाहित जीवन में पति-पत्नी का परस्पर निष्ठावान रहना इत्यादि अनेक अंगों को अपने पंथ की पूजा-विधि के साथ मिलाकर, उनको अपने पंथ का एक आवश्यक अंग विख्यात करते हैं। ये धर्म के अंग तो ठीक हैं, परन्तु इनकी आड़ में पूजा पद्धति को भी ठीक और अनिवार्य घोषित करने का प्रयास विश्व भर में उत्पात उत्पन्न करने वाला सिद्ध हो रहा है।

राज्य का विधि-विधान धर्म का अंग है, परन्तु राज्य व्यवहार में पूजा, नमाज़, गिरजा, मस्जिद, मुहम्मद, ईसा, मूसा इत्यादि का प्रतिबन्ध लगाने से तो राज्य भी अधर्मी हो जायेगा। अधर्म का विरोध करने में राज्य का भी विरोध अनिवार्य हो जायेगा।

इसी प्रवृत्ति ने विश्व भर में महान् हत्या-काण्ड कराये हैं। अनेक महापुरुषों को मृत्यु के घाट उतारा है। असंख्य स्त्रियों पर बलात्कार और उनके अपहरण कराये हैं।

पंथ और धर्म में भ्रम उत्पन्न किया गया है। यह ठीक है कि नेताओं ने स्वार्थ सिद्धि के लिए ऐसा किया है, परन्तु जन-साधारण उन नेताओं के कहने पर उपद्रव करने के लिये तैयार हो जाता है। धर्म पूजा पद्धति का सूचक नहीं। धर्म आचरण से सम्बन्ध रखता है।

यह एक सत्य है कि धर्म पंथ से व्यापक है। कहा जाता है कि यह बात सृष्टि के आदि में कही गई थी और इसका उल्लेख महाभारत ग्रंथ में आता है। महाभारत भी सुगमता से दो सहस्र वर्ष पहले का लिखा माना

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जा सकता है। उस समय ब्रह्मा के मुख से एक सच्चाई कलहवायी थी जो आज भी उतनी ही सत्य और उपकारी है जितनी कि उस समय रही होगी। धर्म और पंथ पृथक् बातें हैं। जहां-जहां जिस-जिस प्रवर्त्तक ने पंथ के साथ धर्म का सम्मिश्रण किया है, उसने मानव समाज का अकल्याण ही किया है। अब होना यह चाहिये कि उक्त कसौटी के अनुसार राज्यों और समाजों को नियम में बांधा जा सकता है। भले ही वह किसी पंथ के साथ सम्बन्धित हों। पंथ के विषय में न तो राज्य को और न ही समाज को हस्तक्षेप करना चाहिए।

हिन्दू समाज का पतन भी इसी भेद को न समझने से हुआ है। हिन्दू समाज ने तिलक, छाप, चोटी इत्यादि को सनातन धर्मों के समान पदवी दी और भूल से अथवा जान-बूझ कर इनके विपरीत व्यवहार रखने पर लोगों का पंथ से बहिष्कार करना आरम्भ कर दिया। यही भूल इस्लाम में है। वे मज़हब को धर्म अर्थात् सामाजिक कानूनी की पदवी देते हैं। यही भूल पाकिस्तान निर्माण में हुई है। मज़हब के आधार पर दो देश बना दिये हैं।

हमने इस अध्याय में पंथ के लक्षण दिये हैं। मनुष्य को पंथ के विषय में पूर्ण स्वतन्त्रता होनी चाहिये। साथ ही पंथ को धर्म अथवा राज्य के कानूनों में हस्तक्षेप नहीं करना चाहिये।

हमने यह भी बताया है कि प्रायः प्रत्येक समुदाय ने मज़हब (पंथ) और धर्म को गलत-मलत कर रखा है। दोनों को पृथक्-पृथक् रखना चाहिए। धर्म समाज के अधीन हो। पंथ व्यक्तिगत विषय है। इसमें किसी का भी हस्तक्षेप नहीं हो सकता।

पंथ के नाम पर संगठनों के हम विरुद्ध नहीं। परन्तु इन संगठनों को यह समझ लेना चाहिये कि वे अपने पंथ की बात किसी भी दूसरे व्यक्ति पर बल, छल से आरोपित नहीं कर सकते। यदि कहीं किसी पांथिक समुदाय के हाथ में राज्य-सत्ता आ जाये तो वह धर्म के अंश का तो पालन कर और करा सकता है, परन्तु पंथ के विषय में राज्य-बल का प्रयोग अनुचित होगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

पंथ का संस्कृति से सम्बन्ध नहीं। पंथ का धर्म से सम्बन्ध नहीं और न ही पंथ का सम्बन्ध अर्थ अथवा काम उपलब्धि से है।

ग्यारह

राष्ट्र और जाति

हमने यह बताया है कि राष्ट्र के लिए एक घर (देश) होना चाहिए। साथ ही यह भी बताया है कि राष्ट्र की संस्कृति और धर्म समान होने चाहिएं। दूसरे शब्दों में यह कहा जा सकता है कि समान संस्कृति और समान धर्म के लोग एक देश में रहते हुए एक राष्ट्र कहलाते हैं।

परन्तु जाति का सम्बन्ध जन्म से है। यह संस्कृति और धर्म के साथ सम्बन्ध नहीं रखती।

जातियां दो प्रकार की हैं। प्राणियों में घोड़ा, बैल, तोता, मैना, मछली, मेंडक इत्यादि अनेकानेक जन्म-जात जातियां होती हैं। मनुष्य इनमें एक है।

दूसरी प्रकार की जातियां मनुष्यों में हैं। इनकों अंग्रेज़ी में 'Race', हिन्दी में सन्तति कहते हैं। उदाहरण के रूप में अंग्रेज, फ्रांसीसी, जर्मन, इटालियन, यहूदी, अरब, हिन्दुस्तानी इत्यादि।

मनुष्य की ये जातियां कृत्रिम हैं। इस पर भी हैं। इन्हें हम कृत्रिम इस कारण कहते हैं कि प्राणियों की जातियों की भांति ये पूर्णतः जन्म से सम्बन्ध नहीं रखती। बन्दर और बिल्ली में संयोग से सन्तान उत्पन्न नहीं हो सकती। इसी प्रकार गधे और कुत्ते में सन्तान नहीं हो सकती। इसी कारण इनको प्राणी की जातियां कहते हैं और ये प्राकृतिक हैं अर्थात् प्रकृति द्वारा निश्चित हैं।

परन्तु मनुष्य की जातियों में दो के परस्पर संयोग से सन्तान हो सकती है। अंग्रेज पुरुष तथा फ्रांसीसी स्त्री सन्तान उत्पन्न कर सकते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किसी काल में इन जातियों में बहुत प्रबल अवरोध था। परस्पर विवाह, खान-पान, सभा-समाज यहां तक कि एक ही मौहल्ले अथवा नगर में रहना पसन्द नहीं करती थीं। यह बात हिन्दुस्तान में ही नहीं, वरंच विश्व भर की मानव समाज में थी, परन्तु यातायात के साधनों में विस्तार से तथा अन्य कई कारणों से जाति-जाति में दीवारें गिरती जा रही हैं।

क्षत्रिय वैश्यों से, गुजराती मराठों से पहले विवाहादि सम्बन्ध नहीं रखते थे। कोई पंजाबी बंगाली से विवाह करता था तो लोग अंगुली उठाते थे। अब तो पंजाब के लोग दक्षिण में भी विवाहादि सम्बन्ध रखते हैं।

हमारा यह मत है कि जातियों का काल जा रहा है, परन्तु जातियों को राष्ट्र से गलत-मलत नहीं किया जा सकता। राष्ट्र आचार-विचार और धर्म से सम्बन्ध रखने वाला जन-समूह है। इसका एक देश के साथ सम्बन्ध है। जातियां एक देश में अनेक हो सकती हैं, परन्तु राष्ट्र अनेक होने घातक ही सिद्ध होंगे।

जाति जन्म के समय ही बनती है। सामान्य रूप में पुत्र पिता की जाति का होता है, परन्तु राष्ट्र इस प्रकार नहीं बनते। जैसा हम मानते हैं, यदि राष्ट्र आचार-विचार से सम्बन्ध रखता है तो जाति भिन्न-भिन्न होते हुए भी राष्ट्र एक हो सकता है और जाति एक होने से भी राष्ट्र भिन्न-भिन्न हो सकते हैं। जो लोग इतिहास नहीं जानते, वे जाति को राष्ट्र से मिलाकर विभ्रम उत्पन्न कर देते हैं। अंग्रेज़ी काल में हिन्दुस्तानियों में एक आन्दोलन चला था कि हिन्दुस्तान में रहने वाले सब एक जाति के हैं। इनका नाम भी हिन्दुस्तानी रखा गया। यह आन्दोलन मिथ्या था। कारण यह है कि हिन्दुस्तान में कई जातियां थीं, जिनमें परस्पर विवाह सम्बन्ध नहीं होता था। जाति जन्म से होती है और जन्म का विवाह से घना सम्बन्ध था। अतः यह आन्दोलन विफल हो गया। अन्तर्जातीय विवाह की प्रथा पहले होनी चाहिए थी तब जाति एक स्वयमेव हो जाती। हिन्दुस्तान में यही बात हुई है। यातायात सुलभ होने के कारण और अंन्य आर्थिक कारणों से विवाह सम्बन्धों में दीवारें गिरती जाती हैं। अतः

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दुस्तान में एक जाति होती जाती है। वर्ण एवं जन्म से जाति कृत्रिम होने के कारण यह मिटती जाती है। छूत-अछूत जातियों का भेद भी दम तोड़ रहा है। यह भी नहीं रहेगा।

इस पर भी देश में ऐक्य नहीं होगा। इन जातियों के बन्धन टूटने से ऐक्य नहीं हुआ। एक काल था जब कि हिन्दुस्तान में पंजाबी, ब्राह्मण, क्षत्रिय, बनिया, लोहार, बढ़ई जातियां थीं। इनमें भी क्षत्रियों में अरोड़ा थे, अरोड़ों में उत्तराडी और डाढ़े थे, फिर इनमें बजाज और बालूजे थे। इस प्रकार देश भर में जातियों की भरमार थी। आज ये सब छोटे-छोटे विभाग समाप्त हो गये हैं और विवाह सम्बन्ध इन दीवारों की बाधाओं के बिना होते हैं। यहां तक कि पंजाबी, मराठे, बंगाली, मद्रासी और अन्य देश के भागों से लोग विवाह सम्बन्ध बनाते हैं, परन्तु देश में ऐक्य नहीं है। कटुता पहले से अधिक है।

तमिलियन तथा आन्ध्रवासी लड़ते हैं। मद्रास में ईसाई और हिन्दू लड़ते हैं। हिन्दी बोलने वालों और अंग्रेज़ी बोलने वालों में सिर फुटोवल होती है। बंगाली, आसामी में झगड़ा है, गुजराती मराठों में मार-काट होती है। अब घरों में ही हत्यायें होने लगी हैं। पत्नी पति की हत्या करती देखी जाती है। भाई-भाई की, पड़ोसी-पड़ोसी की हत्या करते फिरते हैं।

विंचारशील लोगों को यह मानना पड़ेगा कि देश में ऐक्य जाति भेद के कारण नहीं था, वरंच किसी अन्य कारण से था।

महात्मा गांधी ने अपना पूर्ण जीवन हिन्दू-मुसलमान मैत्री पर लगा दिया। देश में इसी ऐक्य को आधार मानकर पाकिस्तान बनने दिया गया और अन्त में इस मैत्री की बलि वेदी पर महात्मा जी की आहुति चढ़ी, परन्तु यह मित्रता नहीं हुई और हिन्दू-मुसलमान एक जाति होते दिखाई नहीं देते।

हमारा मत है कि इन दोनों के वर्तमान स्वरूप रहते हुए ये एक होंगे भी नहीं। कारण यह है कि हिन्दू और मुसलमान जातियां नहीं हैं। जातियां, जैसा हमने बताया है, जन्म से होती हैं। परन्तु हिन्दू का बेटा मुसलमान हो जाता है। मुसलमान का बेटा भी कहीं-कहीं हिन्दू होता देखा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

गया है। यदि ये जाति होती तो इसका जन्म से सम्बन्ध रहता। हिन्दू-मुसलमान जातियां नहीं थीं। इस कारण इनको एक करने के प्रयास विफल गये।

इस पर भी यह देखा जाता है कि हिन्दू करोड़ों की संख्या में मुसलमान हो गये हैं। यह जाति परिवर्तन भी नहीं है। कारण यह कि जातियां एक-दूसरे में मिलजुल तो सकती हैं, परन्तु ये बदल नहीं सकतीं। हिन्दु की सन्तान, किसी भी कारण से क्यों न हो, कलमा पढ़ मुसलमान हो जाती है और मुसलमान यज्ञ वेदी पर बैठ दो मन्त्र बोलने से हिन्दू हो जाता है। यह जातियां होतीं तो ऐसा हो न सकता था। दो जातियों का मिलन तो विवाह होने से होता है। जैसे जब तमिल और मैसूर निवासियों में हो सकता है।

तो प्रश्न यह उपस्थित होता है कि हिन्दू और मुसलमान क्या हैं? हमारा यह विचारित मत है कि दो राष्ट्र हैं। दो जातियां तो एक देश में रह सकती हैं, परन्तु दो राष्ट्र नहीं रह सकते। यदि रहेंगे तो एक अपना घर बना कर रहेगा और दूसरा महमान अथवा किरायेदार बनकर ही रह सकता है।

मुसलमान इस बात को समझते हैं। वे इस्लाम को राष्ट्र मानते हैं। केवल हिन्दुस्तान में ही नहीं, वरंच विश्व भर के देशों में। ये जहां भी रहते हैं, या तो घर बना कर रहना चाहते हैं, अन्यथा अपने को किरायेदार ही समझते हैं। यह एक ऐसा किरायेदार है जो धीरे-धीरे मकान का मालिक बनने का यत्न करता है। अरब और इस्रायलियों का यही झगड़ा है। मुसलमानों ने उन सब देशों में जहां-जहां गये, अपने राष्ट्र को विस्तार दिया और अन्त में उस देश के मालिक बन गये।

हिन्दुस्तान में भी यही झगड़ा था। जब मुसलमान यहां पर राज्य जमा बैठे तब उन्होंने अपने राष्ट्र को विस्तार देना आरम्भ किया। इसमें उचित और अनुचित सब प्रकार के उपाय वे प्रयोग में लाते रहे। तत्कालीन हिन्दू भूल चुके थे कि राष्ट्र क्या बला है? वे वेदानुयायी होते हुए वेद भूल चुके थे और उनके मस्तिष्क में राजपूत, कायस्थ, ब्राह्मण, मराठे, पंजाबी इत्यादि

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

जातियां घुसी हुई थीं। मुसलमानों को भी उन्होंने एक जाति ही समझा था। जैसे महात्मा गांधी अथवा ब्रह्म समाज के प्रवर्त्तक राजा राम मोहन राय तथा इन दोनों के अनुयायी हिन्दू-मुसलमान और ईसाई को जाति मात्र समझते थे, वैसे ही मुसलमानी राज्य के प्रारम्भिक काल के हिन्दू, मुसलमानों को जाति मात्र समझते थे। अतः वे मुसलमानों को अपना बनाने का यत्न करते रहे। अधिक से अधिक उनको यह समझ आया कि हिन्दू-मुसलमान का झगड़ा पंथ गत है। अतः दादू, कबीर, गुरु नानक पंथ विभिन्नता मिटाने का यत्न करते रहे। वे भी ऐसे ही असफल हुए जैसे आज के काल में महात्मा गांधी तथा ब्रह्म समाजी विफल हुए हैं।

मुसलमान अपने राष्ट्र को विस्तार देते रहे और अब भी दे रहे हैं। सन् 1901 के अविभाजित हिन्दुस्तान में पांच करोड़ मुसलमान थे। अब विभाजन के बाद सोलह करोड़ हो गये। हिन्दू भी बढ़े हैं, परन्तु उस अनुपात में नहीं, जिसमें मुसलमान। हिन्दुओं ने अपने को राष्ट्र नहीं समझा। उन्होंने राष्ट्र के स्वरूप को नहीं समझा। वे हिन्दू को एक पंथ अथवा एक जाति मानते रहे। हिन्दू अभी भी अपने को एक राष्ट्र नहीं मानते और राष्ट्र की वृद्धि में यत्नशील न होने से सन् 2001 की गणना में इनकी वृद्धि का अनुपात और कम होगा।

अतः हमारा निष्कर्ष यह है कि जाति जन्म से होती है और मनुष्यों में विभिन्न जाति मानना, एक मिथ्या धारण है।

विश्व के मध्यकालीन युग में अज्ञानता के कारण मनुष्यों में जातियां मानी जाने लगी थीं। इस काल में जातियों का आधार पंथ, देश, रंग इत्यादि माना गया था। यह आधार मिथ्या सिद्ध हुआ है। इन आधारों पर जाति मानने वाले परास्त हो रहे हैं। एक समय वे मुसलमानों से परास्त हुए, पीछे कम्युनिज़्म से परास्त हो गये। देशगत जातिवाद तो अभी है परन्तु जो शक्ति सांस्कृतिक राष्ट्रवाद से उत्पन्न हुई, उसके सम्मुख जातिवाद शिथिल पड़ गया है।

जाति का आधार जहां-जहां देश से सम्बद्ध है, वहां वह केवल देश के नाम पर स्थिर नहीं रह सका। इसके साथ संस्कृति और आचरण सम्बन्धी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बातों को जोड़ने से ही वह आधार बना रह सका है। अंग्रेज़ी जीवन पद्वति (English Way of Life) या अमरीकी जीवन पद्धति (American Way of Life) संस्कृति का आंशिक चित्र ही है। आंशिक संस्कृति (जीवन पद्धति) राष्ट्र का स्वरूप नहीं बनातीं। इस कारण ये इस्लाम के समक्ष पराजित होती जा रही हैं।

अमरीका जैसे समृद्ध देश में भी इस्लाम फैल रहा है और इस आन्दोलन के एक नेता आलीजाह मुहम्मद एक मिश्रित जन्म गत जाति का घटक है। इसके नसों में नीग्रो और स्पेनिश रक्त है। इसका कहना है कि यदि उसका आन्दोलन चलता रहा तो एक दिन अमरीका में एक 'Self Sufficient Black Islam Nation' बन जायेगी। मुसलमान जहां भी जाता है, अपने को इस्लामी राष्ट्र का अंग मानता है और जिस देश में रहता है, उसमें अपनी शक्ति संगठित कर इस्लामी राष्ट्र को शक्तिशाली बनाता जाता है।

आलीजाह अपनी शक्ति धन एकत्रित कर बना रहा है। इसके विषय में अमरीका का एक साप्ताहिक पत्र यह लिखता है:—

'पिछले कुछ वर्षों से एक काला मुस्लिम लड़ाकू (Militant) आंदोलन चल रहा है।.........इसका भय बहुत बड़ा दिखाई दिया, जब, कुछ वर्ष पूर्व, मैलकौम ऐक्स (एक न्यूयार्क का रहने वाला) इस्लाम छोड़ ईसाई हुआ और मार डाला गया। यह विख्यात था कि हत्या इस्लामी बदले की भावना से हुई थी........39 वर्ष 'सन् 1969 में जब यह लेख लिखा गया था' से यह आन्दोलन कि कालों के लिये 'निर्माण' करो और कालों से ही माल खरीदो।...............

'आलीजाह मौहम्मद अब 71 वर्ष की आयु का है। आपका प्रभाव उस पर हुआ प्रतीत होता है...........उसकी पूर्ण शक्ति अब इस बात पर लगी हुई है कि मुसलमानों का आर्थिक साम्राज्य निर्माण किया जाये और वह यह भविष्यवाणी कर रहा है कि इस से एक काला इस्लामी राष्ट्र निर्माण होगा (Time Weekly, March 7, 1969 Page 158)।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हमारा यह कहना है कि जाति एक निरर्थक शब्द है। यह मनुष्यों की मूर्खता का परिणाम है। वास्तविक वस्तु है राष्ट्र। जिस-जिस देश में राष्ट्र की भावना पुष्ट हुई है, वह देश स्वतन्त्र, उन्नत और समृद्ध हुआ है।

भारत में राष्ट्र की भावना मिटनी आरम्भ हुई बौद्ध काल में। उससे पूर्व भारत विश्व भर में एक महान् शक्ति के रूप में रहा था। बुद्ध ने तो केवल व्यक्तिगत आचरण को श्रेष्ठ बनाने पर बल दिया, परन्तु उनके अनुयायियों ने केवलमात्र आचरण को ही अपने पंथ का आधार मान लिया और शेष सब बातों का व्यर्थ मान छोड़ दिया। परिणाम यह निकला कि—

(1) प्राचीन वेद शास्त्र एवं परम्पराओं को व्यर्थ मान छोड़ दिया गया।
(2) भिक्षु धर्म को प्रधानता दे दी गई और सन्तान उत्पन्न करना व्यर्थ माना गया। महाराज अशोक के काल में साठ हजार विहार खुले और उनमें करोड़ों ही नर-नारियां भिक्षु-भिक्षुणियां बन, राष्ट्र वृद्धि का विरोध अर्थात् सन्तान वृद्धि में बाधक बन गईं।
(3) वीरता को क्रूरता माना गया। वीर उत्पन्न करने बन्द कर दिये।
(4) नगर के नगर उजड़ गये और लोग भिक्षु बन देश में घूमने लगे।
(5) अस्त्र-शस्त्रों का बनाना एवं उनमें उन्नति करना पाप मान लिया।
(6) प्राचीन संस्कृति को निःशेष कर नवीन भिक्षु-भिक्षुणियों की संस्कृति बनाई गई।
(7) साहित्य और उसकी भाषा नवीन अपनायी गई।

परिणाम यह हुआ कि देश दुर्बल हो गया। विदेशों से आक्रमण हुए और रहा-सहा राष्ट्र विनष्ट तब हुआ, जब देश पर विदेशी राज्य स्थापित हो गया।

मुसलमानों के हिन्दुस्तान में आने पर एक पृथक् राष्ट्र देश में आया। एक प्रमुख हिन्दू दल के एक वरिष्ठ नेता ने एक बार कहा था कि इस देश में आने वाले मुसलमान नहीं थे, वरंच मुगल ईरानी, अफगान और तुर्क थे। यह विचार ही था जो मुसलमानों के आने के समय हिन्दूस्तान के हिन्दुओं

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

का था। वे देश में हिन्दू राष्ट्र का नाम भूल चुके थे और उनको राष्ट्र की परिभाषा भी विस्मरण हो चुकी थी। अतः उनको इस्लामी राष्ट्र दिखाई नहीं दिया, केवल मुगल, तुर्क, पठान ही दिखाई दिये थे।

हिन्दुओं ने पांच सौ वर्ष की दासता के उपरान्त यह अनुभव किया था कि हिन्दू भूल कर रहे थे। अतः शिवाजी, गुरु गोविन्दसिंह, बन्दा बैरागी और उनके उपरान्त महाराजा रणजीत सिंह हुए जिन्होंने अनुभव किया कि यहां राष्ट्र का पुन-निर्माण करना चाहिए, परन्तु इसके नव-निर्माण हो सकने से पूर्व ही एक अन्य राष्ट्र यहां आ पहुँचा। यह ईसाई राष्ट्र था।

इस्लामी राष्ट्र आया था पठान, तुर्क और मुगलों के कंधे पर चढ़कर; और ईसाई राष्ट्र आया स्पेन, फ्रांस और इंग्लैण्ड के कन्धों पर बैठकर। स्पेनिश और फ्रांसीसी कुछ परिस्थितियों के कारण यहां से चले गये, परन्तु राष्ट्र ईसाई रहा। अब हिन्दुस्तान में तीन राष्ट्र रहने लगे—हिन्दू, मुसलमान और ईसाई।

अंग्रेज़ जान गया कि हिन्दू राष्ट्र, जो मराठा और सिक्खों के उत्थान से पुनः जागृत हो चुका है, उनका और मुसलमानों का विरोध कर दोनों को परास्त करने की सामर्थ्य रखता है। अतः उन्होंने हिन्दू राष्ट्र को पुनः विस्मरण कराने का यत्न किया। मैक्समूलर, मैकडानल्ड तथा अन्य अनेकों ने यहां के विश्वविद्यालयों की सहायता से एक लहर उत्पन्न करने का यत्न किया जो हिन्दू राष्ट्र नाम की वस्तु को निःस्तेज करने में लग गई।

इस लहर की भयानकता को जाना महर्षि स्वामी दयानन्द ने और उन्होंने हिन्दू साम्राज्य एवं हिन्दू राष्ट्र को पुनः जागृत करने का यत्न किया। सन् 1857 के उपरान्त महर्षि एकमात्र व्यक्ति थे, जिन्होंने यह घोषणा की कि इस देश में हिन्दी राष्ट्र भाषा हो; वेदों की मान्यता हो और हिन्दू राज्य तथा विश्व में आर्य संस्कृति एवं सभ्यता का प्रसार हो। उन्होंने अपने महान् ग्रन्थ सत्यार्थ प्रकाश में लिखा कि एक दम्पती के घर ग्यारह तक सन्तान होनी चाहिये। यह उन्हीं का कथन था कि देश भर में मनु की स्मृति का चलन होना चाहिये।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

 Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

परन्तु अज्ञानवश अथवा मूर्खता के कारण कांग्रेसी नेताओं ने, जो कुछ अंग्रेज शासकों की सहायता से ईसाई राष्ट्र ने हिन्दू विरोधी प्रचार यहां किया था, उसी को स्वीकार किया। इस प्रचार को महात्मा गांधी ने आगे चलाया। श्री जवाहरलाल नेहरू और उनकी सुपुत्री इन्दिरा गांधी वही कुछ करते रहे हैं।

हमारा अभिप्राय यह है कि हिन्दू कोई जाति नहीं है। हिन्दू पंथ भी नहीं है। हिन्दू एक राष्ट्र है। जाति जन्मजात होती है। पंथ व्यक्तिगत होता है, सामूहिक नहीं। राष्ट्र सामूहिक आचार-विचार से सम्बन्ध रखता है।

आचार-विचार का देश एवं परम्पराओं से घनिष्ट सम्बन्ध होता है। परम्पराओं से हमारा अभिप्राय इतिहास से भी है। अतः राष्ट्र का सम्बन्ध देश से अति घनिष्ट है।

यूँ तो पंथ और जातियां भी अपने देश से सम्बन्ध बनाती रहती हैं, परन्तु यह बात है नहीं। जातियां देशों की सीमायें पार कर भी बनी रहती हैं और देश की सीमा के भीतर भी नहीं रह सकतीं। पंथ व्यक्तिगत आचरण के साथ सम्बन्ध रखता है। अतः जहां व्यक्ति जायेगा, वहां यह भी जायेगा। देश के साथ यदि किसी बात का विशेष सम्बन्ध रहता है तो वह राष्ट्र का है।

पंथ और जाति किसी देश से सम्बन्धित इस कारण हो जाते हैं, क्योंकि पंथ और जाति वालों ने अपने आधार को सुदृढ़ करने के लिये कुछ लक्षण राष्ट्र के भी, अपने में ले लिये होते हैं। राष्ट्र के साथ देश का होना आवश्यक होता है, अतः पंथ और जातियां अपने में राष्ट्र का अध्यास कराने के लिये देश से सम्बन्ध विशेष मान लेती हैं।

इस अध्याय में हमने राष्ट्र और जाति में अन्तर बताने का यत्न किया है। संक्षेप में जाति का सम्बन्ध जन्म से है। जन्म का सम्बन्ध विवाह से होता है। राष्ट्र का सम्बन्ध धर्म और संस्कृति से है। धर्म एवं संस्कृति जाति के इतिहास तथा साहित्य से सम्बन्ध रखते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बारह

भारत में राष्ट्र

हमने बताया है कि इस देश का प्राचीन नाम भारत है। त्रेतायुग के आरम्भ में तो यह ब्रह्मवर्त देश, ब्रह्मर्षि देश, मध्य देश और आर्यावर्त देश था, परन्तु इन चारों को और इनके अतिरिक्त इनसे बाहर मलेच्छ देशों को लेकर भारत बना था।

मलेच्छ का अर्थ है संस्कृत भाषा के अतिरिक्त भाषा बोलने वाले अथवा वर्णाश्रम धर्म नहीं मानने वाले। इनको भी सम्मिलित कर हिमालय से सागर पर्यन्त और सिन्धु नदी से ब्रह्मपुत्र नदी पर्यन्त देश भारत देश है।

वैसे भारत के रहने वाले भारती होने चाहियें, परन्तु किन्हीं कारणों से भारती शब्द प्रचलित नहीं हो सका। इसके स्थान हिन्दू शब्द अधिक प्रसिद्ध हुआ। यह शब्द उक्त सीमाओं वाले देश में रहने वालों के नाम के रूप में देश के भीतर और बाहर भी प्रसिद्ध हुआ। आरम्भ में निवासियों के नाम पर देश का नाम पड़ा। ब्रह्मवर्त, ब्रह्मर्षि देश और आर्यावर्त नाम इसी बात को सिद्ध करते हैं, परन्तु पीछे अन्य कारणों से भी नाम पड़ने लगे। भरत मुनि अथवा भरत सम्राट के नाम पर यह भारतवर्ष हुआ। जब देश और देश के बाहर भारती नाम विख्यात होने लगा तब हिन्दू नाम की ख्याति पर्याप्त हो चुकी थी। हमारा यह भी विचार है कि देश के रहने वालों ने हिन्दू को अधिक पसन्द किया था, क्योंकि यह देश पहले ही सप्त सिन्धु के नाम से प्रख्यात था। यह देश सात पवित्र नदियों के नाम से विख्यात था। नदी का पर्याय सिन्धु है। अतः यह सप्त सिंधु से सिंधु और सिंधु से तदनन्तर हिन्दू-स्थान प्रसिद्ध हो गया तथा यहां के रहने वाले हिन्दू हो गये और देश हिन्दुस्तान हो गया।

वर्तमान स्वराज्य सरकार ने इसे भारत स्वीकार किया है और यहां रहने वालों को भारतीय माना है। इस नाम को स्वीकार करने से स्वराज्य

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

सरकार ने यह स्वीकार किया कि विदेशों में इस देश को भारत ओर यहां रहने वालों को भारतीय नहीं माना जायेगा। इस कारण देश का नाम भारत अर्थात् इण्डिया और देश के रहने वालों को भारतीय अर्थात् इण्डियन रखा गया। यह इस बात की स्वीकारोक्ति है कि भारत नाम एक अविख्यात नाम था।

इण्डिया शब्द हिन्दू का अपभ्रंश है। अतः प्रश्न यह उत्पन्न होता है कि जब विदेशों के लिये इण्डिया इस देश का नाम स्वीकार किया गया, तो देशवासियों के लिये हिन्दुस्तान नाम क्यों नहीं रख लिया गया? एक प्रश्न और है कि हिन्दुस्तान का नाम बदला क्यों गया?

हमें इसका केवल मात्र एक ही कारण प्रतीत होता है कि हिन्दुओं के विरुद्ध मुसलमान और ईसाई राष्ट्रों ने बहुत अधिक विषवमन किया था। इसके धर्म, इसकी संस्कृति, इसकी परम्पराओं और इतिहास, कला, साहित्य की भरपूर निन्दा की थी। उनकी व्यापक निन्दा की उपज वर्तमान कांग्रेसी जन हैं और वे हिन्दू शब्द को निन्दनीय मान छोड़ बैठे हैं। यद्यपि ये मूर्ख इण्डिया और इण्डियन शब्द नहीं छोड़ सके। परन्तु हिन्दू शब्द को देश के भीतर निन्दनीय करने की इनको उतनी ही आवश्यकता अनुभव हुई, जितनी की अंग्रेज़ और मुसलमान को हुई। कदाचित् उससे भी अधिक। वे यह समझते हैं कि हिन्दू राष्ट्र एक इतना प्रबल संगठन है कि इसके रहते अन्य कुछ भी पनप नहीं सकता। ये लोग जानते हैं और इसी कारण हिन्दू शब्द का घोर विरोध कर रहे हैं।

इस स्थान पर यह प्रश्न उत्पन्न होता है कि कांग्रेस अब हिन्दू राष्ट्र को क्यों नहीं मानती? हमारा कहना यह है कि कांग्रेसी राष्ट्र की विवेचना नहीं जानते। ये जातीयता को भी नहीं समझते। पंथ के विचार से इन्हें कुछ ज्ञान है अथवा नहीं, इनकी आत्मा ही जाने। हां, इनका एक केन्द्र बिन्दु है, जिस पर ये सब एकत्रित होते हैं और हो सकते हैं। यह केन्द्र बिन्दु है अपना प्रभुत्व, स्वार्थ, सुख-भोग और सत्ता। इनके अतिरिक्त कुछ भी ऐसी बात प्रतीत नहीं होती कि जिस पर ये एकमत हो सकें।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपनी प्रभुता, स्वार्थ, सुखभोग और सत्ता के लिये ये कुछ भी कर सकते हैं और करते रहे हैं। दूसरों को गाली देने से लेकर देश की हत्या तक करने के लिए तैयार रहते हैं। पाकिस्तान बनना स्वीकार किया, एक तिहाई कश्मीर गया, हिमालय गया, कच्छ का एक क्षेत्र गया और लंका को भी द्वीप, यद्यपि बहुत छोटा है, चुकी है। ये और क्षेत्र भी देंगे, यदि उसके देने से इनकी सत्ता और स्वार्थ कुछ अधिक काल तक चल सका।

एक बात और है। सन् 1967 के पंच-वर्षीय निर्वाचनों में कुछ एक राज्यों में कांग्रेस दुर्बल हुई तो संयुक्त विधायक दल बने। उन संयुक्त विधायक दलों में भी कांग्रेसी मिल गये और उन दलों के चौधरी बन गये। ये दल बदलू प्रायः वे कांग्रेसी थे, जिनके स्वार्थों पर अन्य कांग्रेसी अधिकार जमा उनको निःशेष कर चुके थे। प्रायः सब संयुक्त विधायक दलों में हरियाणा, पंजाब, उत्तर प्रदेश, बिहार और बंगाल में, निष्कासित कांग्रेसी ही प्रमुख बन गये थे। जब कांग्रेस ने इन दल-बदलुओं के स्वार्थों की सिद्धि का वचन दिया तो ये संयुक्त विधायक दल छोड़ पुनः कांग्रेस में आ मिले। स्वार्थ के लिये दल बदले और यह अभी भी चल रहा है।

सत्ता अपने हाथ में रखने के लिये नेता लोग मुसलमानों को देश के राष्ट्र से पृथक् रहने को प्रोत्साहन देते हैं, अछूतों को अछूत नामधारी बना रहने में उत्साहित करते हैं। यह सत्ता समेट रखने के लिये देश को उन विदेशों से मिलाये हुए हैं, जो देश की जड़ों में तेल दे रहे हैं। ये निर्धनों के माता-पिता (पालक) बनते हैं और साथ ही धनी-मानियों को प्रत्येक प्रकार की सुविधा देते हैं। यह इस कारण नहीं कि धनी-मानी देश का हित कर रहे हैं, प्रत्युत इस कारण कि धनी-मानी लोग उनके लड़कों का बिना काम लिये पैन्शन देते हैं।

अभिप्राय यह है कि कांग्रेस एक समुदाय है, जिसका न धर्म है, न ईमान है; जिसके लिये न परमात्मा है, न आत्मा; जो न पाप मानता है और न पुण्य। वह एक बात जानता है कि यदि किसी भी कार्य से राजगद्दी मिल सके तो वह कार्य करना पुण्य है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दू राष्ट्र इसको पसन्द नहीं करता। इसी कारण ये हिन्दू शब्द का विरोध करते हैं। कांग्रेसी हिन्दू धर्म को नीच समझते हैं और हिन्दू राष्ट्र से भयभीत हो इसे बुरा-भला कहने लगते हैं।

राष्ट्र के जो लक्षण हमने लिखे हैं, वे कांग्रेस अथवा प्रायः अन्य राजनीतिक दल अपने में नहीं रखते। वे हैं–

(1) प्राचीन इतिहास और परम्पराओं को आधार मानकर देश में एक ऐसा संगठन उत्पन्न करना जो अन्तर्राष्ट्रीय जगत् में अपने अस्तित्व को स्थिर रख सके।

(2) इस संगठन का एक देश है। जैसे परिवार का एक घर होता है। यह नहीं कि घर में रहने वाला परिवार है, वरंच परिवार का घर होना चाहिये। यह भी नहीं कि जो भी भारत में आ बसे, वह यहां का राष्ट्रीय है। होना यह चाहिये कि यहां के राष्ट्र के लिये एक घर हो। कांग्रेस ने देश का बंटवारा कर यह सिद्धान्त माना, परन्तु अज्ञानवश इस्लामी राष्ट्र के लिये तो एक पृथक् घर दे दिया, परन्तु हिन्दू राष्ट्र के लिए घर (देश) की आवश्यकता न मान देश के लिये एक नये राष्ट्र का निर्माण करना आरम्भ कर दिया। देश का नाम हिन्दुस्तान छोड़ कर भारत स्वीकार किया। विदेशों में इण्डियन नाम की ख्याति देख यह स्वीकार तो किया पर देश में इण्डियन का पर्याय हिन्दू स्वीकार नहीं किया। यह इस बात का प्रमाण है कि कांग्रेसी विधायक हिन्दू राष्ट्र से घृणा करते हैं। भारत के रहने वालों को झूठ बोलकर धोखा देते रहे कि उन्होंने भारत नाम इस कारण स्वीकार किया है कि भारत प्राचीन नाम है। यदि इस कारण होता तो विदेशों के लिये भी भारत नाम ही रखा जाता। यूँ तो पाकिस्तान भी विश्व में अविख्यात नाम था। उससे हिन्दू शब्द अधिक ख्यातियुक्त था। भारत किसी प्रकार से भी प्राचीनता के कारण स्वीकार नहीं किया गया। उसका एक उद्देश्य था कि हिन्दू नाम संसार से उठ जाये। अतः हमारा यह कहना है कि पाकिस्तान बन जाने के उपरान्त हिन्दू राष्ट्र के लिये एक घर चाहिये, उसका नाम हिन्दुस्तान ही हो सकता था।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(3) यहां धर्म व्यवस्था हिन्दू धर्म व्यवस्था होनी चाहिये थी। हिन्दू धर्म व्यवस्था किसी पंथ (Religion) के आधार पर नहीं। यह धर्म-व्यवस्था गुण और आचरण के आधार पर बनी थी। धर्म के अध्याय में हम बता आये हैं कि धर्म पन्थ का पर्याय नहीं। हिन्दू धर्म-शास्त्रों में धर्म की तीन श्रेणियां की गई हैं। सनातन धर्म, सामान्य धर्म और विशेष धर्म। इनमें प्रथम दो का पालन करना अनिवार्य है। सनातन धर्म तो सबको और सर्वत्र, सामान्य धर्म समान परिस्थितियों में समान रूप से, विशेष धर्म स्वेच्छा से पालन करने के लिये हैं। अन्त में, प्रत्येक व्यक्ति को दूसरे के साथ वैसा व्यवहार करना चाहिये जैसा व्यवहार वह अपने साथ दूसरों से चाहता है।

हिन्दू राष्ट्र इस धर्म का पालन पूर्ण देश में चाहता है। यहां इतना बता देना ठीक होगा कि इस समय कांग्रेसियों के भारत में ऐसा नहीं है। न तो यहां सनतान धर्मों की महिमा है और न ही सबके साथ समान व्यवहार होता है।

जहां एक मासिक पत्रिका दिल्ली सरकार की नाक के नीचे राम और कृष्ण को गालियां दे सकती है, वहां इस देश में कोई यह कहने का भी अधिकार नहीं रखता कि महात्मा गांधी उतने बड़े महापुरुष थे जितने कि मुहम्मद साहब थे। अनेकों बातें गिनायी जा सकती हैं कि जिनमें इस कांग्रेसी राष्ट्र में पक्षपात, अन्याय, असत्य, दगा सब चलते हैं।

(4) श्रेष्ठ संस्कृति के लिए श्रेष्ठ संस्कार, विशेष रूप में बालक बालिकाओं के लिये आवश्यक हैं। यही हिन्दू संस्कृति की मांग है। श्रेष्ठ वे हैं जो मनुष्य को वासनाओं में रत न रखकर शरीर, मन और आत्मा को उन्नत करें। इस समय शिक्षा और कला और साहित्य में निकृष्ट प्रवृत्तियां लायी जा रही हैं। वर्तमान युग के सिनेमा, फिल्म और उपन्यास साहित्य वासनाभिभूत हैं और यही प्रचलित किये जा रहे हैं।

(5) हम बता चुके हैं कि दूध और घी का तथा अन्न-अनाज अथवा फलों की उपलब्धि में वर्तमान युग में अभाव होता चला जाता है। गो-हत्या

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

बन्द करने के लिए वर्तमान सरकार तैयार नहीं। विपरीत इसके गो-हत्या को प्रोत्साहन देने में संलग्न है।

(6) हिन्दू राष्ट्र की मांग है कि राष्ट्र में परिवार धारण करने वाली स्त्रियां हों। परन्तु देश में परिवार नियोजन की धूम है।

(7) भारत में वीर, धनुर्धारी (अस्त्र-शस्त्रों के चलाने में कुशल), धीर और बुद्धिमान अधिक संख्या में हों। वासनामय कला-कौशल और साहित्य के उपासक वीर और अस्त्र-शस्त्रों में कुशल हो सकेंगे क्या? हम समझते हैं कि अमेरिका, इंग्लैंड, फ्रांस और कुछ अन्य यूरोपीय देशों का, वीरता में ह्रास उनके वासनामय जीवन का परिणाम ही है। यह इस पुस्तक का विषय नहीं कि हम यूरोपीय देशों में हो रहे अनाचार, अन्याय और भीरुता के उदाहरण यहां दें। इस पर भी वियतनाम में अमेरिका की दुर्बलता तो सामने है ही। राजनीति में भविष्यवाणी कठिन है। इस पर भी यह कहने में संकोच नहीं कि इंग्लैंड की भांति अमरीका भी ह्रास के पथ पर है। इसका प्रमुख कारण है वहां अत्यधिक मद्यपान, स्त्री-गमन और अन्य शारीरिक सुखों में रत होना। अतः हिन्दू राष्ट्र वीर, धीर और बुद्धिमान युवक निर्माण करने की मांग करता है।

(8) हिन्दू राष्ट्र की एक मनःस्थिति भी है। परमात्मा का अस्तित्व, आत्मा का अमरत्व और फल की अनिवार्यता, ये उस मन-स्थिति की परिचायक हैं। परमात्मा, आत्मा और पुनर्जन्म के सिद्धान्तों को युक्ति और प्रमाण से सिद्ध किया जा सकता है। यद्यपि उसके लिये यह पुस्तक नहीं। यहां हम यह बताना चाहते हैं कि हिन्दू संस्कृति का यह अंग है। इसका पंथ के साथ सम्बन्ध नहीं, वरंच इसका सम्बन्ध भारतीय ज्ञान-विज्ञान से है। हिन्दू राष्ट्र का यह एक महान् आधार है और यही इसका अन्य राष्ट्रों से अन्तर है।

हमने इस अध्याय में यह बताया कि इस देश का नाम भले ही भारत है, परन्तु इसमें के राष्ट्र अर्थात् इस देश के मालिक (परिवार) का नाम हिन्दू है। यह इस कारण नहीं कि यह नाम इनको ईरानियों अथवा

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अफगानों ने दिया था, वरंच इस कारण कि यहां के निवासियों ने इस देश को सप्त सिन्धु का पवित्र देश माना था। सिन्धु से ही हिन्दू शब्द का निर्माण हुआ है। यहां रहने वाले हिन्दू हैं। वर्तमान सरकार जो हिन्दुओं के विपरीत विषवमन करती रहती है, उसने ही इस देश वालों को भारती का नाम दिया। उनकी हिन्दू के प्रति घृणा मुसलमानों और अंग्रेज़ों द्वारा उत्पन्न की हुई है। देश के रहने वाले कोई अन्य नाम स्वीकार कर सकते हैं, परन्तु उसके लिए उद्देश्य मुसलमानों और ईसाइयों को प्रसन्न करना नहीं होना चाहिए वरंच नाम की सार्थकता अथवा निरर्थकता पर विचार कर ही ऐसा किया जा सकता है।

देश भारत हो सकता है परन्तु राष्ट्र हिन्दू ही होगा।

हमने इस अध्याय में यह भी बताया है कि हिन्दू राष्ट्र का आधार जाति अथवा पंथ (Religion) नहीं। इसका आधार धर्म, संस्कृति और सर्वव्यापक परमात्मा तथा आत्मा पर विश्वास है। साथ ही कर्मफल की अनिवार्यता पर विश्वास है। हमने यह भी बताया है कि हिन्दू राष्ट्र का देश वह है जिसकी प्राकृतिक सीमायें हमने ऊपर बतायी हैं। देश राष्ट्र के लिए परम आवश्यक तत्त्व है। वह देश ऐसा होना चाहिये जिसकी रक्षा सुगमता से की जा सके।

तेरह

देश अनेक राष्ट्र अनेक

क्या देश में कई राष्ट्र नहीं रह सकते? यह प्रश्न है। हमने यह कहा है कि जैसे एक घर में कई परिवारों के रहने से कलह-क्लेश उत्पन्न होता है, वैसे ही एक देश में कई राष्ट्र रहने से कलह-क्लेश उत्पन्न होते हैं।

परिवार का आधार है एक माँ की सन्तान होना और परस्पर परिवारजन्य मान-प्रतिष्ठा एवं सहानुभूति। जब मां की सन्तान में भी मान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

एवं सहानुभूति न रहे तो वह भी एक परिवार नहीं रहता और परिवारों के लिए पृथक्-पृथक् घर बनाने पड़ते हैं।

इसी प्रकार एक देश में एक ही राष्ट्र रह सकता है। यदि किसी कारण से अनेक राष्ट्र रहें तो कलह-क्लेश से बचने के लिए देश का विभाजन होगा और यदि विभाजन न हो सके तो एक राष्ट्र को पृथक् घर बनाना होगा।

इसमें देखने की बात यह है कि क्या दो लड़ने वाले राष्ट्र वास्तव में दो हैं अथवा एक ही हैं। यदि वे मन से दो हैं तो पृथक्-पृथक् घर बनाना होगा।

हिन्दुस्तान में मुट्ठी भर इस्लामी राष्ट्र के लोग आये। हिन्दुओं ने उनको बताया कि वे राजा तो हो गये, परन्तु वे हिन्दू राष्ट्र से भिन्न नहीं हैं। इस कारण उनका राज्य होना इतना बुरा नहीं है। वे भी हिन्दू राष्ट्र में सम्मिलित हो जायें। ऐसा कहने वाले दादू, कबीर, गुरु नानक इत्यादि सन्त थे, परन्तु मुसलमान स्वयं को पृथक् राष्ट्र मानते रहे और राज्य को अपने राष्ट्र के प्रसार में प्रयोग करते रहे। इस पर हिन्दुओं को समझ आया कि राष्ट्र के साथ राज्य एक अत्यावश्यक वस्तु है। अतः उन्होंने राज्य पर हिन्दू राष्ट्र का अधिकार करना चाहा। ऐसा करने वाले शिवाजी, गुरु गोविन्द सिंह और मराठा सरदार थे। हिन्दू राष्ट्र की विजय होने के साथ ही एक नवीन राष्ट्र यहां आया। वह था ईसाई राष्ट्र। यह राष्ट्र इस्लामी राष्ट्र से अधिक चतुर सिद्ध हुआ। इसने ईसाई राष्ट्र को हिन्दुस्तान में स्थापित करने के लिए जहां अपने राष्ट्र में वृद्धि करनी चाही, वहां हिन्दू राष्ट्र को निन्दनीय सिद्ध करने का यत्न किया। साथ ही मुसलमानों को हिन्दू राष्ट्र के विरुद्ध करने का यत्न किया। उनको हिन्दू विरोधी समझ भड़काया। पहले प्रयास का परिणाम था कांग्रेस और ऐसे हिन्दू जो हिन्दू कहने में लज्जा अनुभव करते थे, दूसरे प्रयास का फल हुआ पाकिस्तान।

दुर्भाग्य से स्वराज्य मिला उनको जो न तो राष्ट्र का अर्थ समझते हैं और न ही हिन्दू का अर्थ जानते हैं। अंग्रेजों ने हिन्दू को एक मज़हब घोषित किया और जवाहरलाल प्रभृति और उनके पीछे अनेकानेक अनभिज्ञ

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

हिन्दू भी हिन्दू को मज़हब मानने लगे। मज़हब राष्ट्र का आधार नहीं हो सकता था, अतः हिन्दू को मज़हब मानने वाले हिन्दू राष्ट्र को दुर्बल सिद्ध करने वाले सिद्ध हुए। इसके विपरीत वे हिन्दू विरोधी राष्ट्रों को सुदृढ़ करते रहे।

इस्लामी राष्ट्र का पृथक् देश पाकिस्तान बन जाने के उपरान्त भी इस्लामी राष्ट्र के अंश हिन्दुस्तान में बैठे रहे। फिर इनसे डर के मारे कांग्रेसियों ने हिन्दुस्तान का नाम मिटा दिया। वे हिन्दू का नाम भी मिटाने वाले हैं। इन्होंने केवल इस्लामी राष्ट्र को ही यहां नहीं रखा और वृद्धि नहीं दी, वरंच हिन्दू समाज में जाति, स्थान, खान-पान, भाषा इत्यादि के नाम पर भी पृथक् राष्ट्र बनने में सहायता दी। हिन्दुओं में तमिल, सिक्ख, नागालैंड, कश्मीरी, गुजराती, बंगाली इत्यादि की भावनाएं उत्पन्न करने का यत्न किया। सबसे अधिक अहितकर बात इस देश में जो कांग्रेसियों ने की वह थी कम्युनिस्ट मज़हब के आधार पर एक नवीन राष्ट्र पनपने में सहयोग देना।

परन्तु क्या ये सब एक राष्ट्र हैं? सरकार का कहना है कि एक भारतीय राष्ट्र निर्माण करना है, जिसमें हिन्दू, मुसलमान, सिक्ख, पारसी, ईसाई इत्यादि सब सम्मिलित होंगे। इसके लिए वे हिन्दू राष्ट्र को विनष्ट कर देना चाहते हैं।

हमारा विचार है कि यह कांग्रेसियों की छलना है अथवा मूर्खता है। उन्होंने अपने (भारतीय) राष्ट्र का आधार क्या बनाया है, यह स्पष्ट नहीं किया। क्या केवल देश-भक्ति राष्ट्र का आधार हो सकती है? यद्यपि देशभक्ति भी कांग्रेसी-राष्ट्र की आधारशीला नहीं, क्योंकि ये कम्युनिस्टों और मुसलमानों को अपने राष्ट्र का एक परमावश्यक और अभिन्न अंग मानते हैं। ये दोनो समुदाय राष्ट्र के मुख्य अंग धर्म को स्वीकार नहीं करते। ये धर्म के उस अटल सिद्धांत को 'आत्मनः प्रतिकूलानि परेषां न समाचरेत्' को स्वीकार नहीं करते। ये अपने मज़हबी हो गये लोगों (इस्लाम तथा कम्युनिस्टों) के साथ एक व्यवहार करते हैं और दूसरों के

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

साथ दूसरा। धर्म के सनातन रूप को भी ये स्वीकार नहीं करते। सबसे बड़ी बात यह है कि ये अपने मत प्रचार के लिए बल एवं छल का प्रयोग करने में राज्य-सत्ता का प्रयोग अनिवार्य रूप में करते हैं। ऐसा करने वाले राष्ट्र का अंग नहीं हो सकते।

यदि मुसलमान, ईसाई और अन्य समुदाय राष्ट्र की इस बात को मान जायें कि देश के धर्म को वे मानेंगे, धर्म समुदाय-समुदाय का पृथक्-पृथक् नहीं हो सकता। यह एक होगा तो बहुत अंशों में वे देश के राष्ट्र का अंग माने जा सकते हैं। संस्कृति भी यहां की ही होगी, आचरण भी यहां का ही होगा। उदाहरण के के रूप में यहां स्त्रियां बुर्का नहीं पहनतीं। यहां स्त्रियां एक पत्नी के पति के साथ रहना चाहती हैं तथा यहां राक्षस और पैशाच विवाह वर्जित हैं। इसी प्रकार यहां विचारों पर प्रतिबंध हम नहीं चाहते। विचार रखने में सब स्वतन्त्र हैं और विचार प्रसार में स्वतन्त्रता है। यहां मजहब परिवर्तन की स्वतन्त्रता है, यह दण्डनीय नहीं है। इसी प्रकार की अनेक बातें राष्ट्र धर्म में आती हैं। जो यह नहीं मानते वे राष्ट्र का अंग कैसे हो सकते हैं?

यदि इस प्रकार का हल्ला-गुल्ला, दंगा होना है, जैसा कि पिछले दिनों महात्मा गांधी और हज़रत मुहम्मद की तुलना के अवसर पर कलकत्ता में हुआ था, अथवा जैसा कि कुछ वर्ष हुए हज़रत मुहम्मद के चित्र छापने पर हुआ था, अथवा कश्मीर में हज़रत की मूँछ के बाल गुम हो जाने पर पूर्वी पाकिस्तान में हुआ था, तो एक राष्ट्र की भावना कैसे हो सकती है?

यह भावना इस कारण ही है कि मुसलमानों में एक अंश अवश्य ऐसा है जो कि अपने को एक पृथक् राष्ट्र समझता है। इसी कारण वे अपने लिए एक राज्य मांगते थे। अब ये पुनः मागेंगे।

यदि मज़हब को राष्ट्र से पृथक् बात मानी जाती तो न पाकिस्तान की आवश्यकता थी और न ही अब किसी प्रकार के पृथक् राज्य की आवश्यकता होगी।

मुसलमानों के उदाहरण का अनुकरण कर नागालैण्ड के ईसाइयों ने भी पृथक् राज्य मांगना आरम्भ कर दिया है। हमारे नेता और प्रथम प्रधान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

मन्त्री ने उनको राज्य तो पृथक् दे दिया, परन्तु उनके विद्रोही अंश को सन्तुष्ट नहीं कर सके।

अब एक अन्य प्रकार की राष्ट्र से पृथकता पनपने लगी है। वह है प्रान्तीयता अथवा भाषा साम्राज्य। इसके साथ ही मज़हब के आधार पर जिले भी संगठित होंगे उसकी मांग भी उठेगी।

अतः, हमारा यह कहना है कि जो लोग राज्य अथवा देश प्रबन्ध का आधार मज़हब बनाते हैं, वे देश में राष्ट्र का विरोध करते हैं। इससे झगड़े बढ़ते रहे हैं और बढ़ते ही जायेंगे।

राष्ट्र का आधार न मज़हब (पंथ) है और न रंग-रूप। यह है आचार-विचार जिसे संस्कृति का नाम दिया है और धर्म जिसे आचरण का नाम दिया गया है। जब किसी जन-समूह की समान संस्कृति हो, समान धर्म हो, तब वह राष्ट्र कहलाता है। इस राष्ट्र का एक देश और उस देश में राज्य होना अनिवार्य है। कारण यह है कि संस्कृति और धर्म की रक्षा बिना राज्य और देश के हो नहीं सकती।

एक घर में दो परिवार, विशेष रूप में जो न तो जाति से एक हों और न आचार-विचार तथा संस्कृति से एक हों, वह घर में मालिक बन नहीं रह सकते। कभी रह भी गये तो शीघ्र ही झगड़ा होगा। यह ठीक है कि यदि घर में स्थान पर्याप्त हो तो परिवार मालिक और दूसरा मेहमान बनकर रह सकता है। यह बिना कुछ दिये अथवा दाम देकर (Paying Guest) मेहमान होकर रह सकता है, परन्तु मालिक नहीं हो सकता।

यही बात राष्ट्र की है। यहां यह स्मरण रख लिया जाये कि हम मज़हब (पंथ) की बात नहीं कर रहे, हम नागरिकों के आचार-व्यवहार की बात कर रहे हैं। हम मुहम्मदियों पर अर्थात् हज़रत मुहम्मद से बताई पूजा विधि पर आपत्ति नहीं कर रहे। इसे हम न तो राष्ट्र का अंग मानते हैं और न ही राष्ट्र भावना में बाधक। परन्तु जो मुहम्मद साहब के मज़हब के आधार पर विशेष क्षेत्र, धर्म के उल्लंघन की स्वीकृति और अपने लिये देश के जन-समूह से पृथक् धर्म अर्थात् कानून मांगते हैं, वे राष्ट्र का अंग नहीं माने जा सकते।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अतः हमारा मत यह है कि एक देश में एक ही राष्ट्र होना चाहिये। दूसरे राष्ट्र मेहमान के रूप में रह सकते हैं, देश के मालिक बन कर नहीं। हम पुनः अपने विश्वास का उल्लेख करते हैं कि हम मज़हब तथा व्यक्तिगत स्वतन्त्रता जो विशेष धर्मों में आती है, से राष्ट्र के एक होने में अन्तर नहीं मानते। परन्तु व्यक्तिगत धर्म और सनातन तथा सामान्य धर्मों में अन्तर समझ लेना चाहिये। झूठ बोलना व्यक्तिगत धर्म नहीं है। दूसरे को धन, जन अथवा अन्य पार्थिव बातों का प्रलोभन दे पंथ परिवर्तन कराना विशेष धर्म नहीं। इसी प्रकार की अनेक बातें हैं जो विशेष धर्मों में आती हैं और नहीं भी आतीं। जिनका प्रभाव कर्त्ता के अतिरिक्त किसी अन्य पर न होता हो वे हैं व्यक्तिगत धर्म।

उदारहण के रूप में कोई सिगरेट पीता है, दूसरा मद्य सेवन करता है। ये अधर्म तो हैं, परन्तु इनका प्रभाव जब तक कर्त्ता के अपने तक सीमित रहता है तब तक ये विशेष धर्मों का उल्लंघन होते हुए भी चिन्ता का विषय नहीं। परन्तु शराब से बदमस्त हो दूसरों से दंगा-फसाद करने वाला सामान्य धर्मों का उल्लंघन करने से दण्ड का भागी हो जाता है।

अतः जब हम एक राष्ट्र और एक देश की बात करते हैं तो हमारा यह अभिप्राय नहीं कि किसी को उसके मज़हब तथा व्यक्तिगत स्वतन्त्रता के कारण पराये राष्ट्र का मानते हैं।

चौदह

निष्कर्ष

(1) वर्तमान भारत में जन-समुदाय जो आदिकाल से यहां रहता आ रहा है, जो इस देश में ज्ञान-विज्ञान अर्थात् सृष्टि, प्राणी, मनुष्य और इसमें शरीर, मन, बुद्धि, आत्मा तथा परमात्मा के रहस्यों की एक विशेष ढंग से खोज करता है, जो इस देश की रक्षा अपना सर्वस्व न्यौछावर कर भी

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

करता रहा है तथा जो इसमें के धर्म और संस्कृति के सर्वकालीन स्वरूप को स्वीकार करता रहा है अथवा उसकी रक्षा करता रहा है, वह समुदाय हिन्दू है।

(2) भारती शब्द भारत के नागरिकों के लिये व्यापक रूप में कभी स्वीकार नहीं हुआ। हिन्दू शब्द पिछले तेरह-चौदह सौ वर्षों से देश के भीतर और बाहर एक विशाल जन-समूह ने स्वीकार किया हुआ है।

अतः हम कोई कारण नहीं समझते कि हिन्दू नाम को बदलकर कोई अन्य नाम स्वीकार किया जाये। देश और देश में रहने वालों का नाम भारत और भारतीय रखने वाले भी यह स्वीकार करते हैं कि भारत और भारती नाम विदेशों में स्वीकार नहीं किया जाता। इसी कारण उन्होंने इसे एक दूसरा नाम देना भी आवश्यक समझा है अर्थात् 'India and Indian'।

देश में भी हिन्दू नाम भारतीय नाम से अधिक विख्यात है। कुछ लोग केवल हठ के कारण हिन्दू शब्द को स्वीकार नहीं करते रहे और उनको प्रसन्न करने के लिए देश का नाम और देशवासियों का नाम बदला गया है। नाम बदलने पर भी क्या उन्होंने विशाल बहुसंख्यक समुदाय में अपने को विलीन किया है? हमें यह दृष्टिगोचर नहीं होता। इसके विपरीत वह लोग अनेक प्रकार से अपनी संख्या अधिक कर पुनः वही करने का षड्यन्त्र कर रहे हैं जो सन् 1947 में हुआ था।

हिन्दू नाम का समुदाय जाति नहीं है। कारण यह है कि जाति जन्म काल में नहीं बदल सकती और अनेकों हिन्दू आचार-विचार बदलने से अहिन्दू हो चुके हैं और अब अनेकों अहिन्दू अपने रहन-सहन बदल कर हिन्दू हो रहे हैं।

(4) हिन्दू मजहब भी नहीं है। अभिप्राय यह है कि यह किसी पूजा पद्धति से सम्बद्ध, मोक्ष साधन के उपाय से अथवा किसी ऐसे सिद्धान्त से सम्बद्ध नहीं है, जिसको बुद्धि से ग्रहण नहीं किया जा सके। साथ ही हिन्दू समुदाय में किसी पूजा पद्धति का विरोध भी नहीं है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

(5) हिन्दू एक जीवन पद्धति है और सर्वमान व्यापक विचारशैली है। जीवन पद्धति का पारिभाषिक शब्द धर्म है और विचारशैली को संस्कृति कहते हैं।

यह किसी एक प्रकार की सभ्यता भी नहीं। सभ्य समाज के सिद्धान्त को स्वीकार करते हुए हिन्दू समुदाय उस सभ्यता के प्रदर्शन के भिन्न-भिन्न उपाय रखता है। उदाहरण के रूप में किसी को मिलने पर अभिवादन करने के समय अनेक प्रकार के वाक्यों का प्रयोग को क्षम्य एवं निरापद समझता है।

(6) उक्त लक्षण वाले समुदाय को, अर्थात् जो जाति न हो, जो मज़हब (Religion) न हो, जो केवल जीवन पद्धति और विचार-शैली पर आधारित हो, को राष्ट्र कहते हैं। अतः हिन्दू एक राष्ट्र है।

(7) एक राष्ट्र किसी सीमाओं वाले देश में ही रह सकता है और देश की रक्षा और उनमें व्यवस्था के लिए राज्य की आवश्यकता रहती है। अतः हिन्दू राष्ट्र का देश हिमालय से समुद्र पर्यन्त और सिन्धु नदी से ब्रह्म पुत्र पर्यन्त है। ऐतिहासिक कारणों से देश छोटा-बड़ा होता रहा है, परन्तु यह स्वभाविक सीमायें बार-बार इसे प्राप्त होती रही हैं। देश और राष्ट्र का नाम भी बदलता रहा है, परन्तु राष्ट्र की आत्मा, जीवन पद्धति और विचारशैली एक रही है। आज देश भारत है। राष्ट्र का नाम हिन्दू है। कुछ लोग इसे भारती बनाने का यत्न कर रहें हैं। भारती शब्द के विपरीत केवल यह आपत्ति है कि कुछ लोगों ने कांग्रेसियों को डरा, धमका कर रखवाया है और राष्ट्र के स्वरूप को बिगाड़ने के लिये बहाना बनाया जा रहा है।

(8) जीवन पद्धति का नाम ही धर्म है और धर्म का सार स्मृतिशास्त्र के एक प्रवक्ता ने लिखा है। वह यह कि जो व्यवहार कोई अपने साथ किया जाना पसन्द नहीं करता, वह व्यवहार उसे किसी दूसरे के साथ नहीं करना चाहिये। जो इस सिद्धान्त पर आचरण नहीं करता, वह धर्म का पालन नहीं करता और उसे राष्ट्र का अंग नहीं माना जा सकता। यद्यपि धर्म के अन्य अंग भी हैं, परन्तु वे उक्त सार के अन्तर्गत ही आ जाते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

यदि कुछ व्याख्या में लिखा जाये तो हिन्दू धर्म वर्णाश्रम धर्म है। वर्णाश्रम धर्म का सार है कि जो जिसके योग्य है, उसे वैसा ही कार्य करने को दिया जाये। जिस वयस् में जो कार्य कोई मनुष्य करने के योग्य हो, उसमें वह कार्य करे। कार्य करने से आर्थिक प्रतिकार तो कार्य के अनुसार होगा, परन्तु आत्मोन्नति का मार्ग सबके लिए सब वर्ण और आश्रमों में खुला है।

(9) विचारशैली को संस्कृति कहते हैं। उसमें भी सार की बात यह है कि प्रत्येक प्राणी में आत्मा एक अमर पदार्थ है। वह अव्यक्त है, अव्यय है, अमर है और अजन्मा है। वह कर्म करता है और उसका फल भोगता है। इसी सिद्धान्त का एक उप-सिद्धान्त है। वह यह कि कर्म का फल अवश्यम्भावी है। कभी-कभी कारणवश फल को रोका जा सकता है अथवा इससे उत्पन्न होने वाले सुख-दुःख को कम किया जा सकता है, परन्तु फल तो मिलता है। इस जन्म में नहीं तो भावी जन्म में मिलेगा।

अतः हिन्दू राष्ट्र के दो आधार हैं। एक धर्म और दूसरा संस्कृति।

ये दो आधार हिन्दू राष्ट्र को वेद द्वारा मिले हैं। वेदों से सम्पर्क बनाये रखने की आवश्यकता इस कारण है कि धर्म और संस्कृति में समय व्यतीत होने से विकृति आने का निराकरण किया जा सके। इन आधारभूत बातों को हिन्दू केवल मात्र इस कारण नहीं बदल सकते, क्योंकि कोई दूसरा कहता है। हमने जैन और बौद्धों को यह अधिकार दिया कि वे वेदों से तटस्थ हो कर हिन्दू राष्ट्र की मूल-भूत बातों को मानते हुए चलें, परन्तु उन मूल-भूत बातों को रखने और समय-समय पर संशोधन करने के लिये हिन्दू वेदों से सम्पर्क रखना चाहते हैं तो किसी को आपत्ति नहीं होनी चाहिये।

धर्म और संस्कृति मूल रूप में बदली नहीं जा सकती।

(10) जो हिन्दू राष्ट्र की उक्त मूल-भूत बातों को नहीं मानते, वे हिन्दू राष्ट्र से भिन्न राष्ट्र के लोग हैं। वे किसी देश में ऐसे ही रह सकते हैं, जैसे किसी परिवार के घर में दूसरे परिवार वाले महमान बनकर अथवा किरायेदार बन कर रहते हैं।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

अपने भावों को, जिनका हमने ऊपर निष्कर्ष निकाला है, स्पष्ट करने के लिये कुछ लोगों की शंकायें यहां लिखकर उनका समाधान करना चाहते हैं। यहां मुख्य-मुख्य शंकाओं का ही निराकरण करना सम्भव है।

शंका—(1) यहां इस देश में एक समन्वय चलेगा संस्कृति में एवं धर्म में। इसको अंग्रेज़ी में लोग इस प्रकार प्रकट करते हैं—हमें Composite Culture का निर्माण करना चाहिये।

यह विचार भ्रममूलक है। कारण यह कि 'कल्चर' में सम्मिश्रण नहीं हो सकता। यदि किसी प्रकार का सम्मिश्रण किया गया तो एक असफल बात को कृत्रिम उपायों से निर्माण करने से वह टूट जायेगी और अन्त में अति भयंकर स्थिति उत्पन्न होगी। दो पेड़ों की शाखायें तो एक-दूसरे में मिल-जुल सकती हैं, परन्तु मूल नहीं मिल सकते। शाखाओं का सम्मिश्रण कृत्रिम होने से परस्पर हवा, प्रकाश के लिये विरोध हो जायेगा। वह विरोध मूल भिन्न होने से निःशेष नहीं हो सकेगा।

सभ्यता में सम्मिश्रण हो सकता है। उदाहरण के रूप में भोजन किसी मेज पर बैठ कर किया जाये अथवा पलथी मार बैठ कर किया जाये, इस विषय में समन्वय हो सकता है। एक भाई भूमि पर पलथी मार बैठ भोजन करे और दूसरा मेज-कुर्सी पर बैठकर भोजन करे, परन्तु एक यह मानता है कि मेरा प्रत्येक कर्म फल देगा। इस जन्म में नहीं तो अगले जन्म में और दूसरा यह मानता है कि जन्म से मृत्यु पर्यन्त ही प्राणी का अस्तित्व है। इस जन्म में वह सुख भोग प्राप्त करने के लिये जो कुछ भी सम्भव हो करेगा। उसके फल को वह शक्तिशाली, धनवान् और सर्व प्रतिष्ठित होने से मृत्यु पर्यन्त टाल सके तो फल से बच जायेगा। बताइये, इन दोनों बातों में कैसे समन्वय हो सकता है? इससे तो बलशाली दुर्बलों को कच्चा चबा जायेंगे।

संस्कृति का समन्वय नहीं हो सकता। मूल संस्कृति की बात सर्वमान्य होनी चाहिये। सबसे प्रबल विरोध धर्म के विषय में होगा। हम यह मानते हैं कि जो व्यवहार हमें अपने साथ पसन्द नहीं, वह हम दूसरों के साथ न करें। परन्तु दूसरा मानता है कि हज़रत मुहम्मद पर ईमान न लाने वाला

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

काफिर है। भला दोनों में समन्वय कैसे होगा?

धर्म के मूल को तो मानना ही पड़ेगा। वैसा आचरण करना ही पड़ेगा। नहीं करेंगे तो देश के राष्ट्र में सम्मिलित नहीं हो सकेंगे।

'Composite Civilization' सभ्यता हो सकती है, परन्तु इससे राष्ट्र निर्माण नहीं होता। उदाहरण लीजिये अफ्रीका के बहुत से देशों में मज़हब ईसाई है। प्रायः सब नेक्टाई, कालर और कोट-पतलून भी पहनते हैं। परन्तु वे अंग्रेज़ अथवा फ्रांसीसियों का घोर विरोध कर रहे हैं। हैं वे भी ईसाई और पहनते नेक्टाई, कालर, कोट और पतलून ही हैं।

राष्ट्र का आधार संस्कृति और धर्म है। मज़हब और सभ्यता नहीं।

शंका–(2) यह इतिहास का तथ्य है कि यहां ईसाई, मुसलमान इत्यादि सदियों से रहते आ रहे हैं। उनको यहां रहने का अधिकार है।

इस पर हम आपत्ति नहीं करते। उनके ईसाई, मुसलमान बने रहने पर आपत्ति नहीं है। परन्तु उनको अन्य मत वालों के समान बनकर रहना होगा। यदि ईसाई अथवा मुसलमान किसी के मुसलमान अथवा ईसाई न होने पर उसका पेट छुरे से फाड़ सकने का अधिकार मांगेंगे तो नहीं हो सकता। एक सभ्य और श्रेष्ठ राज्य ऐसा अधिकार नहीं दे सकेगा। एक अन्य उदाहरण लें। यदि हिन्दू मुसलमान बनाया जा सकता है तो मुसलमान भी ईसाई बनाया जा सकता है। इस पर कोई नाराज़ क्यों हो?

अभिप्राय यह है कि राष्ट्र में सम्मिलित होने पर मत परिवर्तन की आवश्यकता नहीं। न ही पहरावे अथवा शरै दाढ़ी, मूँछ रखने में आपत्ति है। आपत्ति है धर्म और संस्कृति के मूल सिद्धान्त पर। यदि ऐसा कहा जाये कि उनके मज़हब में उक्त मूल धर्म और संस्कृति का विरोध है तो वे इस देश में नहीं रह सकते। देश में जब से मुसलमान और ईसाई आये हैं, उन्होंने जब-जब भी राष्ट्र में मिलना चाहा है, आपत्ति नहीं की गयी। यहां तक कि उनमें से कइयों को हिन्दुओं ने अपना गुरु और पैगम्बर भी माना, परन्तु हिन्दुओं ने धर्म और संस्कृति के मूल सिद्धान्तों को सदैव अपना बनाने में शर्त रखी। क्या यह सर्वविदित नहीं कि कबीर मुसलमान

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

होने पर भी करोड़ों हिन्दुओं का पूज्य और मान्य है। वह हिन्दू राष्ट्र का अंग बन गये थे।

शंका–(३) शरा के अनुसार पालन करते हुए मुसलमानों को देश में रहने दिया नहीं जायेगा तो देश में ऐक्य नहीं हो सकेगा।

हमने यह बताया है कि विशेष धर्मों में प्रत्येक स्वतन्त्र है। अतः हिन्दू राष्ट्र में रहते हुए किसी मुसलमान को शरा के उन अंशों का पालन करने में स्वतन्त्रता होगी, जिनका सम्बन्ध उनके अपने साथ है। परन्तु शरा के उस अंश पर अवश्य नियन्त्रण होगा, जिससे एक व्यक्ति का सम्बन्ध दूसरे के साथ होता है।

उदाहरण के रूप में एक मुसलमान दिन में पांच बार नमाज पढ़ना चाहता है। क्योंकि नमाज़ पढ़ना एक व्यक्तिगत बात है, इस कारण हिन्दू राष्ट्र में सम्मिलित होने पर इस पर आपत्ति नहीं की जा सकती। परन्तु यदि शरा यह कहे कि काफिर का ज़र, ज़न लूट लेना सबाब है तो यह व्यक्तिगत आचरण न होते हुए हिन्दू राष्ट्र अपने घटकों से नहीं होने देगा।

जो लोग घोर विरोधी पक्षों को समकक्ष रखने का प्रयास करेंगे, वे देश और समाज में ऐक्य नहीं कर सकेंगे। करना चाहेंगे तो स्वयं भी धोखा खायेंगे और जनता को भी धोखा देंगे। वास्तविक ऐक्य का आधार यह ही होगा कि व्यक्तिगत धर्मों में स्वतन्त्र रहते हुए समष्टिगत धर्मों में राष्ट्र के मूल-भूत सिद्धान्तों के अनुसार व्यवहार किया जाये।

शंका–(4) मुसलमान और ईसाई जैसे हैं, वैसा आचार-व्यवहार रखते हुए इस देश में कैसे रह सकेंगे?

जैसे कोई विदेशी 'टूरिस्ट' (पर्यटक) इस देश में रहता है। वर्तमान सरकार उक्त भावों के विरोधियों को भी देश के राष्ट्र की पदवी देती है। इसका एक परिणाम यह हो रहा है कि दंगे, फसाद हो रहे हैं और देश में रहने वाले विदेशों से सहायता ले यहां उपद्रव की तैयारी कर रहे हैं। यह प्रवृत्ति कश्मीर, नागालैंड, आसाम, बंगाल और केरल में अत्यधिक पायी जाती है।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

निष्कर्ष यह है कि हिन्दू राष्ट्र का आधार धर्म और संस्कृति है। इस राष्ट्र की धर्म और संस्कृति का मूलाधार सार्वभौमिक, सभ्य और सुसंस्कृत मानवों का-सा है। उन मूलाधारों को स्वीकार कर कोई भी मानव हिन्दू राष्ट्र का अंग बन सकता है।

राष्ट्र का अपना देश और उस देश में अपना राज्य होना चाहिये।

****

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

किशोरोपयोगी साहित्य–रोचक, प्रेरणाप्रद, आकर्षक

1. **श्रीकृष्ण** गुरुदत्त 30.00
श्रीकृष्ण पूर्णावतार थे, आंशिक अवतार थे अथवा महानात्मा थे? कुछ भी समझें। उनका सम्पूर्ण जीवन एक कर्मयोगी का जीवन था। साथ ही उन्होंने गीता का जो उपदेश दिया, वह बेजोड़ है।
2. **स्वामी विवेकानन्द** (जीवन झांकी) शिवकुमार गोयल 30.00
अपनी छोटी-सी आयु में जिसने सम्पूर्ण विश्व में अध्यात्म का डंका बजा दिया था, ऐसे कर्मयोगी संन्यासी की जीवन झांकी प्रस्तुत है इस पुस्तक में।
3. **वीर हरिसिंह नलवा** अशोक कौशिक 30.00
वीर प्रसविनी भारत भूमि के एक अद्भुत सुपुत्र की कथा जिसने अटक पार कर हिन्दू राजय स्थापित किया था। जिसका नाम लेकर अफगानी माताएँ अपने बच्चों को डराया करती थीं–चुप कर जा नलवा आ जाएगा।
4. **सदाचार की कथाएँ** योगेन्द्र दत्त
सदाचारी तथा धर्म में कोई अन्तर नहीं है। धर्मयुक्त आचरण ही सदाचार होता है। सदाचार की कुछ प्रेरणाप्रद कथाओं का संकलन।
5. **महर्षि दयानन्द** *(जीवनी)* : पिछले एक सहस्र वर्षों में स्वामी दयानन्द पहले व्यक्ति हुए हैं जिन्होंने घोषित किया कि वेद ज्ञान ईश्वरीय है। स्वामी दयानन्द की जीवन झांकी। गुरुदत्त 30.00
6. **हिटलर की कहानी** *(द्वितीय विश्व युद्ध)* : जर्मनी के तानाशाह हिटलर ने इतनी सैनिक शक्ति संचित कर ली थी कि वह सारे विश्व पर अधिकार करने का विचार करने लगा था। परन्तु अभिमानी का सिर नीचा हो जाता है और यही हिटलर का हुआ। 30.00
7. **जगत् की रचना** : जगत् अर्थात् सृष्टि की रचना किसने की? इस पर आज का वैज्ञानिक यही कहता है कि सृष्टि अपने आप बन गई। अर्थात् कुछ नहीं से बनी। कुछ नहीं से कैसे बन गई? गुरुदत्त 30.00
8. **बोध कथाएँ** : भारतीय साहित्य में ज्ञानवर्धक कथाओं का अम्बार लगा हुआ है। कुछ चुनी हुई कथाएँ इस पुस्तक में संगृहीत हैं। अशोक कोशिक 30.00

प्राप्ति स्थान–

हिन्दी साहित्य सदन

2, बी.डी. चैम्बर्स, 10/54 देश बन्धु गुप्ता रोड,
करोल बाग प्रहलाद मार्केट के समीप, नई दिल्ली 110005

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

श्री गुरुदत्त की हिन्दी जगत् को अनुपम भेंट

हमारी सांस्कृतिक धरोहर

(मूल्य 150 रुपये : डाक व्यय हम देंगे)

वेद, उपनिषद्, भारतीय ज्ञान, इतिहास, पुराण पर
श्री गुरुदत्त जी की रचनाओं का सार एक ही जिल्द में।

भारत गांधी—नेहरू की छाया में

पृष्ठ 414 मूल्य 60/- रु. (डाक व्यय 18/रु.)

अंग्रेजी संस्करण

India in the Shadow of
Gandhi & Nehru

Demy Size Price Rs. 150/-

राजनीति पर श्री गुरुदत्त की रचनाएँ

धर्म तथा समाजवाद	55.00
स्व अस्तित्व की रक्षा-1	35.00
स्व अस्तित्व की रक्षा-2	25.00
भारत गांधी नेहरू की छाया में	60.00
भारतवर्ष का संक्षिप्त इतिहास (सृष्टि रचना से रामोदय तक)	80.00
वर्तमान दुर्व्यवस्था का समाधान—हिन्दू राष्ट्र	40.00
हिन्दुत्व की यात्रा	40.00
मैं हिन्दू हूँ (हिन्दू की मान्यताएँ)	20.00
अन्तिम यात्रा (डॉ. मुखर्जी)	25.00
हिन्दू धर्म	5.00
समाजवाद और पूँजीवाद	5.00
भाव और भावना (संस्मरण)	50.00
भाग्य-चक्र (संस्मरण)	50.00

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

पुस्तकालय
Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri
गुरुकुल काँगड़ी विश्वविद्यालय, हरिद्वार
वर्ग संख्या R o 84.9143 GUR-B आगत संख्या 167954

पुस्तक विवरण की तिथि नीचे अंकित है। इस तिथि सहित 30वें दिन यह पुस्तक पुस्तकालय में वापस आ जानी चाहिए। अन्यथा 50 पैसे प्रतिदिन के हिसाब से विलम्ब शुल्क लगेगा।

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

GURUKUL KANGRI LIBRARY

	Signature	Date
Access No.		
Class No.		
Cat No.		
Tag etc.		
E.A.R.		
Recomm. by.		
Data Ent. by		
Checked		

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

167954
Gurukula Kangri (Deemed to be University) Haridwar

शाशवत वाणी का आगामी प्रकाशन

'मनुष्य और समाज'

मनुष्य क्या है? कैसे इस सृष्टि पर उत्पन्न हुआ और उसका क्रिया-कलाप क्या है? किस कारणवश वह कार्य करता है? मनुष्य के विषय में विचार करते ही ऐसे कुछ प्रश्न सामने आ उपस्थित होते हैं।

वैसे साधारण पुरुष तो मनुष्य को एक हकीकत मानकर चलता है। वह मनुष्य है, इससे आगे उसे सोचने का अवकाश नहीं है और सोचने की वह आवश्यकता भी नहीं समझता।

परन्तु जब कोई दुर्घटना होती है, कोई असाध्य बीमारी आ जाती है, या अन्य घरेलु अथवा आर्थिक कष्ट आता है और कोई रास्ता नहीं सूझता तो वह भी सोचने पर विवश हो जाता है कि उसने कौन से कर्म किये हैं जो ये कष्ट उस पर आये हैं? इस जन्म का कोई दुष्कर्म नहीं सूझता तो पिछले जन्म के कर्म समझने लगता है। तब वह भी विचार करता है कि यह क्या गोरखधंधा है?

यह दर्शन शास्त्र का एक प्रश्न है कि मनुष्य क्या है और इसमें क्या-क्या तत्व मिले हैं?

भारतीय दर्शन शास्त्र ने इस पर बहुत ही सूक्ष्मता से विचार किया है। इतनी सूक्ष्मता से कदाचित् किसी अन्य देश के शास्त्रों ने विचार नहीं किया।

प्रस्तुत पुस्तिका (मनुष्य और समाज) इस विषय पर अध्ययन है। पुस्तक अप्रैल सन् 2002 तक छप जायेगी।

081
167954
CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

GURUKUL KANGRI LIBRARY

	Signature	Date
Access No.		
Class No.		
Cat No.		
Tag etc.		
E.A.R.		
Recomm. by.		
Data Ent. by		
Checked		

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar

Digitized by Arya Samaj Foundation Chennai and eGangotri

8-12-1894 से 8-4-1989

गुरुदत्त एम. एस.सी.

प्रथम उपन्यास ''स्वाधीनता के पथ पर'' से ही ख्याति की सीढ़ियों पर जो चढ़ने लगे कि फिर रुके नहीं।

विज्ञान की पृष्ठिभूमि पर वेद, उपनिषद् दर्शन इत्यादि शास्त्रों का अध्ययन आरम्भ किया तो उनको ज्ञान का अथाह सागर देख उसी में रम गये।

वेद, उपनिषद् तथा दर्शन शास्त्रों की विवेचना एवं अध्ययन अत्यन्त सरल भाषा में प्रस्तुत करना स्व. गुरुदत्त की ही विशेषता थी।

उपन्यासों में भी शास्त्रों का निचोड़ तो मिलता ही है, रोचकता के विषय में इतना कहना ही पर्याप्त है कि उनका कोई भी उपन्यास पढ़ना आरम्भ करने पर समाप्त किये बिना छोड़ा नहीं जा सकता।

राजनीति उनका प्रिय विषय रहा। देश की परिस्थिति पर उ विवेचना सदा ही पठनीय रही।

089.
GU
167

हिन्दी साहित्य सदन

2 बी.डी. चैम्बर्स, 10/54, देश बंधु गुप्ता रोड,
करोल बाग, नई दिल्ली-110005
फोन : 23553624, 23551344 ई-मेल : indiabooks@rediffmail.com

CC-0. In Public Domain. Gurukul Kangri Collection, Haridwar